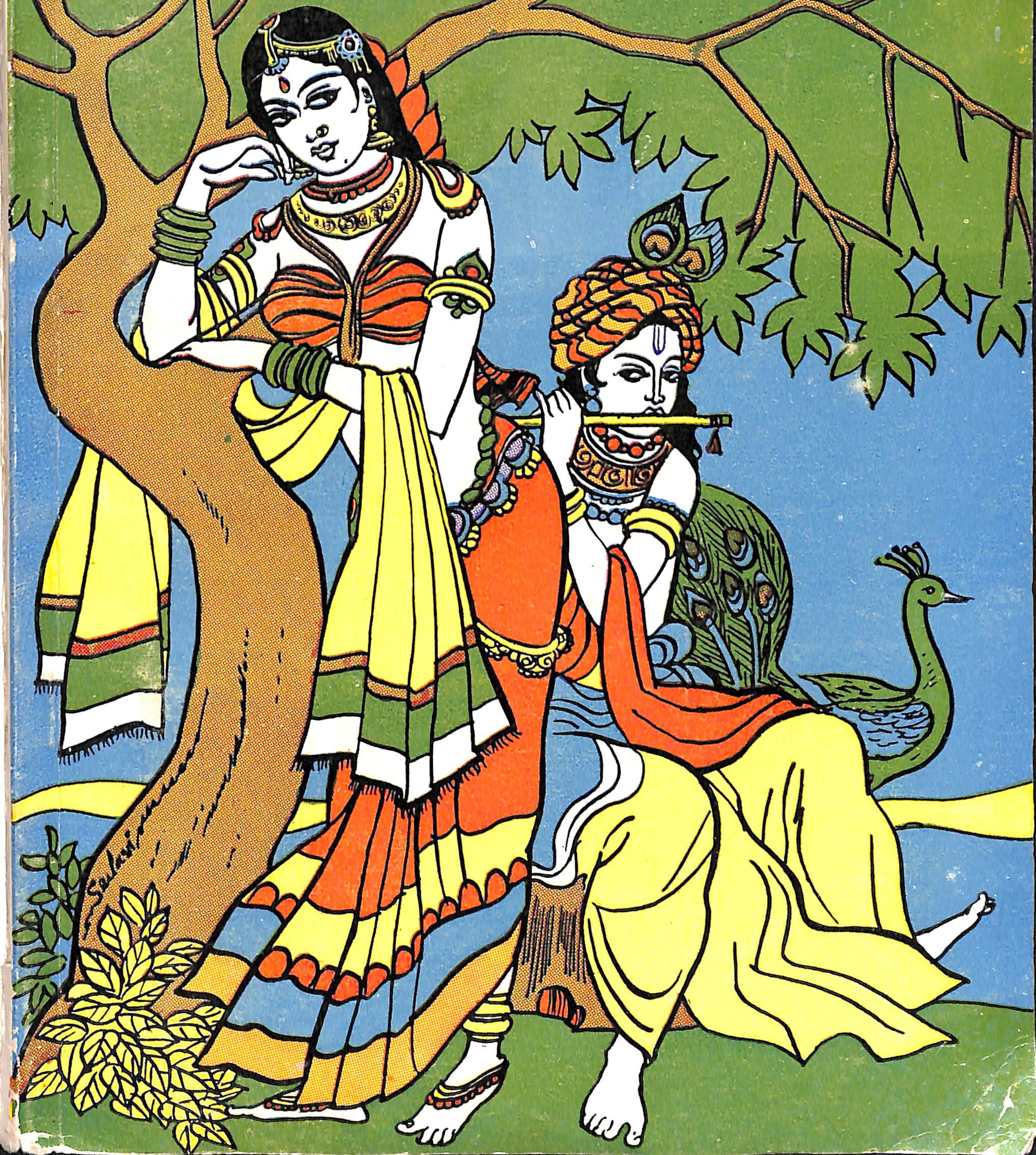
राधा वंशीधर विलास नाटक

(यक्षगान नाटक)

—श्री शाहजी विरचित



राधा वंशीधर विलास नाटक

[यक्षगान नाटक]

लेखक :

श्री शाहजी महाराज

सम्पादक :

श्री मंचाल जगन्नाथ राव,

आकाश वाणी, हैदराबाद



प्रस्तावना

वाङ्मय महाध्यक्ष

डाक्टर वड्लमूडि गोपालकृष्णय्या

कला-प्रपूर्ण

आंध्र प्रदेश गवर्नमेंट ओरियंटल मान्युस्क्रिप्ट्स लइब्रेरी

अंड रिसर्च इन्स्टिट्यूट (स्टेट अर्केव्स)

अफ़जल गंज, हैदराबाद. (आंध्र प्रदेश)

1A

First Publication
Two thousand

Price : **Rs. 3.75 Paise**

Copies available at :-
Andhra Pradesh Government
Oriental Manuscripts Library
and Research Institute,
Afzal Gunj, Hyderabad-12
A. P.

PRINTED AT
THE ANDHRA PRADESH TEXT-BOOK PRESS,
MINT COMPOUND, HYDERABAD-4.

प्रस्तावना

प्रस्तुत रचना राधा वंशीधर विलास नाटक एक यक्षगान नाटक है। तेलुगु भाषा में यक्षगान एक विशिष्ट रचना है। अक्षर छंदों के वृत्तों से, मात्रा छंद के विविध गीतों से सम्मिलित होकर यक्षगान प्रारंभ में काव्य के रूप में होता था। आधुनिक युग की पद्यगेय नाटिका की भाँति प्राचीन काल का यह यक्षगान नाटक क्रमिक रूप से परिवर्तित होता गया।

ई. स. १०वीं सदी के लगभग ही यक्षगानों का प्रारंभ हुआ। सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी में इस साहित्यक विधा के कई रूप हो गये। सबसे पहले महाकवि श्रीनाथ ने तेलुगु में इस शब्द के बारे में जिक्र किया है। भीमेश्वर पुराण में श्रीनाथ कवि (ई. स. चौदहवीं सदी के कवि) कहते हैं।

कीर्तितुरेद्दानि कीर्ति गंधर्वुलु
गांधर्वमुन यक्षगान सरणि

(तृतीय आश्वास)

यह प्रसंग द्राक्षारामकी प्रशंसा में है। मगर श्रीनाथ ने प्रत्यक्ष रूप से इसका जिक्र नहीं किया है। प्रत्यक्ष होते हुए भी यह उल्लेख अप्रत्यक्ष ही है। यहाँ पर कवि का तात्पर्य है, गंधर्वों के गांधर्व विधान में कीर्तिगान करना। पर यक्षगान की ओर इशारा करना नहीं। एक अप्रसिद्ध अंश के बारे में बताने के लिये साधारणतया प्रसिद्ध अंश को हम उपमा के रूप में स्वीकार करते हैं। यहाँ पर श्रीनाथ ने भी सुप्रसिद्ध यक्षगान का उल्लेख करके वताया है कि गंधर्व गाँधर्वगान में प्रशंसा करते हैं। इसका तात्पर्य यह हुआ कि ई. सन् चौदहवीं सदी के लगभग ही यक्षगान काफी प्रसिद्ध हुआ।

ई. स. सोलहवीं सदी के प्रथम चरण के चित्रकवि श्री पेद्दन्ना ने लिखा है।

वृषभगति त्रिपुट रेकंघ्रि युगमुग
दुदनेडु लघुवुलु तोलंगजेय
जंपे रेकुनकु लक्षणमु द्विरद गति
यगु गाननोक लघुवंदु मान

रच्च रेकगुनु दुरग वल्गनमु गति
मरि एकतालियौ मधुर गतिनि

आट तालमुन मात्रलंघ्रि किर्वदि नाल्गु
नाल्गिट विरति पध्नालुगिट

निलुचु नर्धपु नर्ध चंद्रिकलु दीन
यक्ष गानादि कृतुललो नार्युलिडिन
रगड भेदंबुलिवियौनु रम्य चर्य
यविद निजदास समुदाय आंजनेय !

(ला. सा. सं. २–आ)

उपर्युक्त कविने यक्षगानों की प्राचीनता को ध्यान में रखा है। 'आर्युलिडिन रगड भेदालु' (आर्यों के दिये हुए रगड भेद) वाला शब्द कोई आश्चर्यजनक नहीं है। यक्षगान आर्योंकी रचना है? या द्रविडों की– यह एक अलग विषय है। यह कहना भी ठीक नहीं है कि पेद्दना इसे आर्यों की रचना मानते थे। उनकी रचना का यही उद्देश्य था कि पुरखों और प्राचीनोंने, वडे–बूढोंने रगड में यह भेद बना रखा है। 'आर्युलिडिन' शब्द का अर्थ है 'आर्यों से दिये हुए'। पेद्दन्ना का यह कदापि आशय नहीं था कि यक्षगान आर्यों का दिया हुआ है या द्रविडों का। उनका आशय था कि यह यक्षगान बहुत प्राचीन है। श्रीनाथ के समय तक ही यह प्रसिद्ध माना गया। फिर एक शताब्दी के बाद प्राचीन माना गया तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

पल्कुरिकि-के समय तक यक्ष सोमनाथ गान पुराना हो गया।

और एक आश्चर्यप्रद विषय है कि यक्षगान पाल्कुरिकि सोमनाथ कवि के समय में ही [ई. स. १२८०] मशहूर हो गया। तब तक बहुत पुराना हो गया भी था। श्री पाल्कुरिकि सोमनाथ कवि ने 'पंडिताराध्य चरित्र' में शिवरात्रि के जागरण काल में होने वाले विनोद कार्यक्रमों का यों वर्णन किया है।

आदट गंधर्व यक्ष विद्या ध
रादुलै पाडेडु नाडेडु वारु
विधमुन ब्रच्छन्न वेषमुलु दाल्चि
यधिकोत्सवमु दुलुकाडुनट्लु

(४३६ पृ)

इस में एक तिकडमबाजी है। पर इसे कोई नहीं पहचानते। पहचाने बिना कह देते हैं कि सोमनाथ ने गंधर्व यक्ष, विद्याधर आदि के वेष धारणकर नाचने का वर्णन

किया है। पर यह ठीक नहीं है। सोमनाथ के पहले गंधर्व, यक्ष, विद्याधर बन कर गाते थे और नाचते थे। इसका अर्थ हुआ कि गंधर्व आदि का वेष धारण कर गाते थे और नाचते थे। इन नटों और गायकों की तरह प्रच्छन्न वेष धारण कर कुछ लोग गाते थे और नाचते थे। यही सोमनाथ का कथन है। पर सोमनाथ कवि यह सीधे नहीं बताते कि इस द्विपद में गंधर्व, यक्ष, विद्याधर आदि नाचते और गाते हैं। मार्मिकरूप से बताते हैं। 'गंधर्व यक्ष विद्याधर आदि बन कर' का तात्पर्य है नट और गायक गंधर्व, यक्ष, विद्याधर बन जाते हैं या उनका वेष धारण करते हैं। यह तो मुश्किल है कि गंधर्व और यक्ष बनें। पर उनके वेष धारण किये जा सकते हैं। इसलिये हमें इसका यही अर्थ बताना चाहिये कि नट और गायक गंधर्व और यक्षों के वेष धारण करते थे। शिवरात्रि के दिन शिवभक्त भी नटों और गायकों की तरह प्रच्छन्न वेष धारण कर नाचते और गाते थे। और इसे स्पष्ट करने के लिये इस तरह लिखा जा सकता है—शिवरात्रि के दिन गाने वाले और नाचने वाले लोगोंने गंधर्वों का वेष धारण ही नहीं किया, बल्कि उन लोगों की तरह वेष धारण किया, जो गंधर्व यक्ष आदि का वेष धारण कर नाचते और गाते हैं। इसका अर्थ यह होता है कि शिवभक्तों ने गंधर्व और यक्षों का वेष धारण नहीं किया। वरना कवि लिखते हैं कि शिवभक्तों ने गंधर्व आदि का वेष धारण किया। शायद उन्होंने शिव कथाओं से संबंधित समर्ह वेष धारण किये होंगे। उन कथाओं से संबंधित गीत गाये और नाचे होंगे। शिवरात्रि के दिन कुछ भक्तों का वेष धारण कर नाचना और गाना ठीक वैसे ही है जैसे कि गंधर्वों का वेष धारण कर नाचना और गाना, इससे ज्ञात होता है कि सोमनाथ से पहले कुछ लोग गंधर्वों का वेष धारण कर नाचते और गाते थे। कुछ लोग गंधर्व आदि का वेष धारण कर नाचते गाते थे—इसका यहि तात्पर्य होता है कि गंधर्व, यक्ष, विद्याधर आदि गानलोलुप थे। नाट्यलोलुप थे। वे गानलोलुप और नाट्यलोलुप थे— इसलिये उनका अनुकरण होता था, उनके वेषों का अनुकरण होता था। गानलोलुप और नाट्य लोलुपबनकर वे आनंदित होते थे। जनता को आनंदित करते थे। इससे यह स्पष्ट होता है कि सोमनाथ से पहले ही गंधर्व आदि का वेष धारण कर नाचना गाना देश में मशहूर था। इस तरह 'यक्षगान' दसवीं सदी तक ही अपने अस्तित्व को बनाये हुये था, भले ही वह 'सीता कल्याण' नामक नाटक के ढंग में न हों।

'यक्षगान' नाम संस्कृत शब्दों से बना है। किसीने यह नहीं समझा कि एक देशी तेलुगु नाम का यह संस्कृतीकरण है। यक्षगान का पहला रूप और उसके लक्षण देशी रीति से बद्ध थे या मार्गी? इससे भी पहले यक्षगान की परिभाषा, उस शब्द के स्वरूप स्वभाव पर विचार करना होगा। आलोचकों का मत है कि यक्षगान देशी रचना है, मगर मार्गी रचना नहीं है। पर सभी लोगोंने यह भी स्वीकार किया कि यक्षगान में मार्गरूपक रचना रीति अर्थात् शास्त्रीय रचना रीतिने प्रवेश पाया।

रचनाओं के बारे में जानने के लिये कविता के उद्‌गम के बारे में जानना होगा। कविता के उद्‌गम के बारे में जानने के लिये भाषा की उत्पत्ति के बारे में, मानवोत्पत्ति के बारे में जान लेना चाहिये। इसे जानने के लिये सृष्टि की व्यवस्था जाननी चाहिये। सृष्टि-व्यवस्था के मूल स्वरूप स्वभावों के परिणाम के बारे में जान लेना चाहिये। आर्ष दृष्टि से अनुसंधान करना होगा एवं इसे निरूपित करना होगा। पर सत्य सम्मत रूप से निरूपित करना अब साध्य नहीं है। इसलिये इनके मूल तक गये बिना अन्य वास्तविक विषयों को पहचानने की हम यहाँ कोशिश करेंगे।

यक्षगान का तात्पर्य है—यक्षों का गान या यक्षों के लिये गाया जानेवाला गान। और एक अर्थ भी होता है कि यक्षों के गान की तरह गाया जानेवाला गान। पर यक्ष हैं कौन ? वेद वाङ्मय में कई जगहों पर यक्ष और यक्षी शब्द का प्रयोग हुआ।

येन कर्माण्य पसो मनीषिणो
यज्ञे कृण्वंति विदधेषु धीराः
यद पूर्वं यक्ष मन्तः प्रजानां
तन्मे मनः शिव संकल्प मस्तु ।।

अग्नेरनेक मप आविपेशापा
न्नपान्नपाल्पत्ति रक्षन्न सुर्यं
दमे दमे समिधं यक्ष्यग्ने
प्रतिते जिह्वाघृत मव्यरण्यत् स्वाहा ।।

इत्यादि अनेक वेद मंत्रों में यक्षादि शब्द प्रयुक्त हुए। आर्ष दृष्टिकोण, एवं दिव्य चक्षु से न होकर केवल लौकिक बुद्धि से सोचे हुए अर्थ को सामने रखकर वेद विज्ञान का मापतौल करना गलत होगा। जहाँ तक हमारा ज्ञान है—यक्ष देवयोनि विशेष हैं। देवताओं में एक शाखा है। गृह्य सूत्रों में भूतादि के साथ यक्षावाह का उल्लेख हुआ। इसमें कोई अजीबी नहीं है। अयदार्थ भी नहीं है। आवाह भूतादि और यक्षों तक ही सीमित नहीं है। 'देवयोनि विशेष' नामक श्रेणी के हर जात के लिये यह प्रयुक्त होता है। बौद्ध साहित्य में नीति–प्रवक्ता एवं रक्षक के रूप में यक्षों का उल्लेख है, इसलिये कि वे देवता थे। देवता तो सब कुछ कर सकते हैं। ये यक्ष देवयोनि विशेष हैं। वे कामरूपी भी हैं। कई कथायें और गाथायें उनके कामरूपी गुण का समर्थन करती हैं। ऐसा कोई रूप नहीं, जो वे धारण नहीं कर सकते। कुछ लोगोंका यह कथन ठीक नहीं है कि यक्ष भूत 'प्रेत' पिशाच आदि गणों में से हैं। वे किसी भी गण में गिने जा सकते हैं। यक्षों और गंधर्व किन्नर आदि का गहरा संबंध है। कुछ लोगों का यह मत ठीक नहीं है कि गंधर्वों की तरह यक्षगान नृत्य आदि में प्रवीण नहीं हैं। कुबेर यक्षराज ही नहीं, बल्कि किन्नरों का अधिपति भी था।

यक्ष और संगीत

विद्याधरोऽप्सरो यक्षो रक्षो गंधर्व किन्नराः
पिशाचो गुह्यकस्सिद्धो भूतोमी देवयोनयः

यों विविध योनियों का उल्लेख हुआ है। फिरभी कुबेर किन्नरेश है।

कुबेरस्त्र्यंबक सखो यक्ष राडगुहयकेश्वरः
मनुष्य धर्मा धनदो राजराजो धनाधिपः
किन्नरेशो वैश्रवणः पौलस्त्यो नरवाहनः
यक्षैकपिङ्गैलबिल श्रीद पुण्य जनेश्वराः।

यहाँ पर गुह्यकेश्वर और किन्नरेश्वर के रूप में उल्लिखित हुए हैं। "राक्षसों की एक शाखा ही यक्षहै"–श्री वी. वी. आर दीक्षितार के इस कथन में थोडा यदार्थ भी है और अयदार्थ भी। दिति की संतान दैतेय हैं। अदिति की संतान आदितेय हैं। इन दोनों जातियों का पिता एक ही था। दैतेय और आदितेय सौतेले भाई हैं। रावण कुबेर भी एक दूसरे के सौतेले भाई हैं। अव दैतेय आदितेयों की शाखा के हैं या आदितेय दैतेयों से संबंद्ध शाखा के हैं तो यक्षों को राक्षसों से संबंद्ध शाखा के मान सकते हैं। अगर प्रथम विषय में औचित्य है तो दूसरे में भी है। यक्ष कामरूप के कारण राक्षस या पिशाच आदि भी वन सकते हैं। इसलिये कुछ सज्जनों ने यक्षों को उन जातियों के अधिपति के रूप में स्वीकृत भी किया है।

यक्षगान का उद्गम कहाँ से है? भौम जीवी यक्षों से है? या देवयोनि विशेष यक्षों से है? इसे जानने से पहले हम यह देखते चलेंगे कि यक्षों का नृत्य गान से संबंध है या नहीं।

यक्षाश्च नागापि किन्नराश्च
गांधर्व मुख्यापि गानलोलाः

यक्ष गानलोलुप थे–इसे सूचित करने के लिये उपर्युक्त श्लोक की शरण में ही जाने की कोई जरूरत नहीं है।

गीतेन प्रियते देवः सर्वज्ञः पार्वती पति
गोपीपति रनंतोपि वंशध्वनि वशंगतः
सामगीति रतो ब्रह्म वीणासक्ति सरस्वती
किमन्ये यक्ष गंधर्व देवदानव मानवाः

शार्ङ्गदेवने संगीत रत्नाकर में उपर्युक्त विषय वताया है। पर यह उल्लेख कोई अपूर्व विषय नहीं है। मूलरहित भी नहीं है। वास्तव में यक्ष कामरूपी प्राणी हैं।

इसलिये वे कोई भी रूप धारण कर सकते हैं। ऐसी कोई विद्या नहीं है, जो वे साध नहीं सकते। फिर यह कहना सत्य विरुद्ध ही होगा कि नृत्यगान में यक्ष प्रवीण नहीं हैं – या यक्षों की कोई रुचि नहीं है।

कुबेर विश्रवो ब्रह्म का पुत्र है। विश्रवो ब्रह्म, ब्रह्म का मानस पुत्र पुलस्त्य का लडका है। कुबेर ने अपने दादा पुलस्त्य को छोडकर ब्रह्म की घोर तपस्या की और वर पाये। तब पुलस्त्य को कुबेर पर गुस्सा आया। उसने अपने अर्ध शरीर से विश्रवसु की सृष्टि की। कुबेर को अहित पहुँचाने का आदेश दिया। कुबेर को इसका पता लग गया। उसने नृत्य गीतों में निपुण तीन युवतियों को विश्रवस को सर्मपित किया और बताया "मैं तुम्हारा पुत्र बन जाऊँगा। मेरा अहित मत करो।" कुबेर की प्रार्थना पर विश्रवसु आनंदित हुआ और चुप बैठ गया। यह उत्तररामायण की कहानी है। इससे मालूम होता है कि नृत्य-गान में कुबेर की आसक्ति थी। उसके पास नृत्य गान में प्रवीण यक्ष-कन्यायें थीं। इन यक्ष कन्याओं का उपयोग कर कुबेर अपना काम बना लेता था। ये यक्ष कन्यायें न हो कर और कौन हो सकती थीं? इससे मालूम होता है कि यक्ष-कन्यायें नृत्य-गान में प्रवीण थीं।

संगीत के इतिहास के अनुसार यक्षगान संगीत का एक मुख्य भाग है। शास्त्रज्ञों ने वैदिक संगीत को पवित्र संगीत माना है। पवित्र संगीत विभिन्न भागों में विभजित किया गया है। 'पवित्र संगीत–नाट्य संगीत–कालक्षेप संगीत–नाटक संगीत–यक्षगान संगीत आदि आदि। अष्टपदी, तरंग, कीर्तन, दिव्यनाम संकीर्तन, उत्सवों से संबंधित व संप्रदायों से संवद्ध संकीर्तन इत्यादि इसी श्रेणी के हैं। हनुमान, अर्जुन, (पाँडव मध्यम नहीं) नारद, तुंबुर, रावण आदि इस पवित्र संगीत के आविर्भावकर्ता हैं, जो कि पौराणिक पुरुष हैं। हनुमान से विरचित माना जानेवाला एक संगीत ग्रंथ है, जिसमें यक्षों की गान शैली की प्रशंसा है।

मार्गी (शास्त्रीय) संगीत में एक राग है 'यक्ष-प्रिय'। यह यक्षों के लिये अत्यत प्रिय राग है। यक्षों का अनुग्रह पाने के लिये यह राग बडा ही उपयोगी है। यक्ष-प्रिय राग सालग नामक ३७वें मेलकर्ता से जन्य राग है।

इसमें गाँधार देवता ग-ध परिवर्जित हैं।

आरोहण स रि म प नि स:
अवरोहण स नि प म रि स

यह द्विस्वर वर्ज्य राग है। यह स्वच्छ 'यक्ष-प्रिय' राग है। यक्षानंद संधायक है। शास्त्रीय रूप से शत सहस्त्र वर्षों से यह चला आ रहा है। फिर यक्षों के गानलोलुपत्व पर शंका करने की कोई बात नहीं है। भट्टि, कालिदास के काव्यों में यक्षों के नृत्य संगीत

लोलुपत्व का उल्लेख है, जो विशेष माना नहीं जा सकता। यह यक्ष-प्रिय राग परक रचना क्रमशः यक्षगान रूप में परिणत हुई होगी।

कामरूपिता के कारण यक्ष किसी भी रूप को पा सकते हैं। नाट्य गान में परानुभूति से प्रपूर्ण लोगों को स्वस्वानुभूति प्रपूर्ण बना सकते हैं। मानलीजिये कि शंकर पार्वती के साथ क्रीडायें करता रहा। आनंद की अनुभूति पाता रहा। कामरूपधारी होने से यक्ष वे रूप धारण कर सकते हैं। पार्वती परमेश्वर की तरह क्रीडा कर सकते हैं। तद् गत आनंद भी सहज रूप से ही पा सकते हैं। इसी कारण से कामरूपधारियों को स्वपर आनंद के अनुभव की जितनी परवशता है, उतनी मूल पुरुषों को छोडकर और किसी को नहीं हो सकती। किसी भी हालत में नहीं हो सकती। शायद इसी कामरूपिता के कारण बौद्ध शिल्पों में द्वारपालक की रक्षक शक्तियों से इन्हें चित्रित किया गया है।

हमें कोई शास्त्रीय आधार नहीं मिलता, जिससे हम निश्चित रूपसे कह सकें कि यक्षों का एक ही स्थान है। मंत्र, तंत्र, निधि, शिल्प वृक्षादि शास्त्रों का अध्ययन करने पर मालूम होता है कि पंचभूतों में कोई ऐसी चीज नहीं है, जो यक्षों का आश्रयभूत नहीं हो। जमीन और आसमान, हवा और धूल, आग और पानी, पेड-पौधे, लता-गुल्म, पत्थर-वत्थर—ये सब यक्षों के आश्रयभूत हैं। यक्ष शब्द का प्रथम वर्ण 'य' वायु बीज है। चाहे वायु हो, या वायु रूपी, यक्ष हर किसी को पा सकता है। वायु के कारण चलित होने वाले मेघ ही कामरूपी हैं। फिर वायु के कामरूप बनने में आश्चर्य ही क्या है? जन्मतः वायुबीज शक्तिवान यक्ष अगर कामरूपी हैं तो कोई आश्चर्य नहीं। गायत्री सहस्र नामों में यक्षिणी यक्षराजप्रसूतिनी, नामक शब्द प्रयुक्त हैं। इसका अर्थ होता है कि जगदंबा की तरह यक्ष भी सर्वव्यापी हैं। अगर यों विचार किया जाय तो ब्रह्म, विष्णु, महेश्वर, और उनकी पत्नियों के लिये भी यक्षेश्वर आदि शब्द पर्यायिवाची शब्दों के रूपमें प्रयुक्त हो सकते हैं।

कुछ आलोचकों ने यह भी बताया है कि कुछ भौम यक्षोंने भूतल पर राज्य किया है, ये देवयोनि यक्षों से भिन्न हैं। उन आलोचकों ने यह भी बताया है कि यक्षगान दिव्य यक्षों कि अपेक्षा मानव यक्षों से संबंधित है।

जब हम सृष्टि-व्यवस्था के बारे में सोचते हैं तो मानव और देवता ही नहीं, बल्कि उनके विभिन्न संबंधों के बारे में बताते हुए भी डर लगता है। हिचकिचाने लगते हैं। मन पीछे की ओर दौडता है। बिना जाने ही, जाने अनजाने में अगर कुछ बताना पडे तो विश्वास के तौर पर बताना अलग ही बात है। पर जब तर्क सम्मत बताना पडता है तो यह कोई सरल कार्य नहीं है।

ब्रह्माने नाट्य प्रदर्शन किया। महेश्वरने नाट्य बोध किया–यह सब हम मान लेते हैं। यह कोई टाल नहीं सकता कि वेद ब्रह्मा के चारों मुखों से निकले हैं। चाहे अपनी ही दृष्टि से क्यों न हो।

नृत्तावसाने नटराज राजो
ननाद ढक्कां नव पंच वारं
उद्धर्तु कामा सनकादि सिद्धा
नेतद्विमर्शे शिव सूत्र जालम

यह सभी प्रसंगों में शिरोधार्य है। भाषा और व्याकरण का, छंद और कविता का, गीत और संगीत का, नृत्त और नाट्य का सभी विद्याओं का, भूतल और सभी लोकों में व्यवहृत सभी विषयों के मूल के रूप में इस ढक्कानाद को ही स्वीकृत कर सकते हैं। इन्हें विश्वास कहें या क्या कहें? इसका कोई आधार है क्या? इन विश्वासों की आनाकानी कर, अप्रामाणिक मानकर, त्यागकर हमारे विद्वान केवल भौतिकवादी के रूप में चर्चा करेंगे। इसमें भी हमें संदेह है। तब देवयोनि यक्ष अगर यक्षगान करते हैं तो क्या हम उसका विश्वास नहीं कर सकेंगे? पर इसमें स्वल्प रूप से, संदेहास्पद रूप से, अनिर्णीत रूप से सोचने की कोई जरूरत है या नहीं? क्या इसकी शंका भी नहीं करसकते?

यक्षों का भौमाभौमत्य

मानलेंगे कि कुबेर देवयोनि का यक्ष ही है। अलौकिक दृष्टि को छोडकर लौकिक दृष्टि से सोचेंगे, विचारेंगे। कुबेर नरवाहन है। वह या उसकी जाति यक्षगान क्यों नहीं कर सकती? नरवाहन की बात नहीं है। यह यक्षराज मनुष्य धर्मी है। कुबेर का एक नाम है मनुष्य धर्मी। इस विषय का विश्वास किये बिना इन्हें पर्यायवाची शब्दों की श्रेणी में कैसे रख सकते हैं? साहित्यकारों ने इसे पर्यायवाची शब्द क्यों माना है? कुबेरादि यक्षगान करते हैं तो उसमें मानव धर्म ही है। पर अमानुषत्व के लिये कोई स्थान नहीं है।

एक प्रचलित कथा इस प्रकार है। राक्षसों से पहले यक्ष सिंहल पर शासन करते थे। बलि चक्रवर्ती के सेनानी सुमाली ने यक्षों को हराकर वहाँ पर राक्षस राज्य की स्थापना की है। कुछ दिनों के बाद राक्षसों का नाश हुआ। फिर वहाँ यक्षों का राज्य स्थापित हुआ। श्री वी. आर. आर. दीक्षितारने एक लेख लिखते हुए 'महावंश' नामक ग्रंथ को आधारित बनाकर उपर्युक्त विषयों का विवरण दिया। श्री दीक्षितार लिखते हैं–"यक्ष देवयोनि ही न हो कर भौम जीवी भी थे।" श्री दीक्षितार का कथन यदार्थ जँचता है। ब्रह्मवैवर्त पुराण, शिवपुराण, उत्तर रामायण की कथाओं के

परिशीलन से मालूम होता है कि कुबेर देवयोनि होकर भी मानव की भाँति, भौम की भाँति जीवन विताता था।

स्पष्ट होता है कि कुबेर के कई जन्म थे। कुबेर को गुह्यकेश्वर भी बताया है। गुह्यकों में यह प्रथम था। इसलिये कुबेर का यह नाम पड गया। ब्रह्मवैवर्त पुराण बताता है कि गुह्यक श्रीकृष्ण के गुह्य प्रदेश से पैदा हुए। इस गुह्यकेश्वर के वाम पार्श्व से एक कन्या का जन्म हुआ। इस मनोहर कन्या का नाम है मनोरमा। इस मनोरमा से कुबेर ने विवाह किया।

यज्ञदत्त नामक ब्राह्मण का पुत्र था गुणनिधि। गुणनिधि ही शिवप्रसाद की महिमावश विष्णुलोक में कुबेर होकर पैदा हुआ। कुबेर दूसरे जन्म में कलिंगदेश के राजा अरिंदम का पुत्र होकर पैदा हुआ। 'दम' नामसे राज्य किया। यह दम दमही नहीं रहा। सचमुच ही कुबेर हो बैठा। मंदिरों में इसने हमेशा दीपाराधना की व्यवस्था की। काशी में इसने विश्वेश्वर की प्रार्थना की। पार्वती परमेश्वर का साक्षात्कार हुआ। पार्वती परमेश्वर महातेजोमय थे। कुबेर उन्हें देख न सका। उनसे प्रर्थना की कि आपके दर्शन का भाग्य मिलें। भगवान शिव ने 'तथास्तु' बताया। पार्वती के सौंदर्य से प्रभावित होकर दमने उनका वर्णन करना शुरु किया। पार्वती गुस्से में आ गयीं। इससे दम की एक आँख फूट गयी। पार्वती ने शंकर से पूछा कि क्रूर दृष्टि से मुझे देखने वाला यह कौन है ? शंकरने बताया कि यह तुम्हारे पुत्र के बराबर है। हमारा भक्त है। तुम इस पर कृपा करो, पार्वती ने उस पर कृपा की। वर दिया कि तुम्हारी नजर नहीं विगड जायेगी। उस दिन से दम की दाहिनी आँख पिशङ्गाक्ष हो गयी। परमेश्वर ने दम को अर्थात् कुबेर को अलका नगरी, और उत्तरी दिशा का आधिपत्य दे दिये। परमेश्वर की कृपा का वह पात्र बना। उनका मित्र ही हो गया।

कुबेर का और एक जन्म है। कुबेर विश्रवो ब्रह्म का पुत्र है। इसकी माता ऐलबिला है। विश्रवो ब्रह्म ब्रह्म का मानस पुत्र पुलस्त्य ब्रह्म का पुत्र है। कुबेर ने पिता और पितामह को छोड कर ब्रह्मा की तपस्या की। कई वर प्राप्त किये। अतिलोक सुंदर नलकूवर नामक पुत्र, लोक पालकत्व, धनेश्वरत्व, भगवान परमेश्वर से स्नेह का संबंध लंका पर आधिपत्य, इन्हीं वरों में से हैं। इस पर पुलस्त्य को कुबेर पर गुस्सा आया। पुलस्त्य के क्रोध की कहानी का एक बार उल्लेख किया जा चुका है। कुबेरने विश्रवसु को तीन कन्यायें भेंट में दीं। उनके नाम इस प्रकार हैं। 'पुष्कोत्कट,' 'मालिनी', 'राका'। विश्रवसु और पुष्पोत्कट के दो लडके हुए। वे ही रावण और कुंभकर्ण हैं। यह एक अलग ही कहानी है, जिसमें रावण को पुलस्त्य का पुत्र बताया गया है। कुछ जगहों पर रावण की माता का नाम कैकसी बताया गया है। एक बार कुबेर पुष्पक

विमान पर विहार करने लगता है। यह देखकर रावण की माँ रावण से बताती है कि वह विमान काबू में करलें। रावण कहते हैं कि मैं इससे भी एक महान विमान पाऊँगा। फिर तपस्या के लिये निकल पडते हैं। कुछ दिनों तक तपस्या कर लौटते हैं। सुमाली रावण के पास आ कर कहते हैं कि हम लंका निवासी थे। देवताओं ने हमें निष्कासित कर दिया। अब लंका कुबेर के अधीन है। अब राक्षसों का साम्राज्य उन्हें दिला देना चाहिये। सुमाली की बात मानकर रावण कुबेर के पास संदेशा भेजते हैं कि राज्य राक्षसों के अधीन कर दिया जाय। कुबेर अपने पिता के पास जाते हैं। सलाह-मशवरा करते हैं। अपने लिये एक सुंदर नगर माँगते हैं। कुबेर के पिता उसे आदेश देते हैं कि वह कैलाश में चले जायँ। कुबेर कैलाश में रहने लगते हैं। शिव से उनकी घनिष्ठ मैत्री हो जाती है। शिव कुबेर को अलका नगरी देते हैं।

एकबार पार्वती शिव की दक्षिणी जंघा पर बैठती है। कुबेर पार्वती के भाग्य पर ईर्ष्या का अनुभव करते हैं। वक्र दष्टि से उनकी ओर देखते हैं। फिर कुबेर की दाहिनी आँख फूट जाती है। कुबेर दुखी हो जाते हैं। फिर तपस्या में बैठ जाते हैं। शिव कुबेर की तपस्या से प्रसन्न हो जाते हैं। कुबेर को दृष्टि दे देते हैं। पर फूटी हुई आँख को पिशङ्ग वर्ण प्रदान करते हैं। इसीलिये कुबेर को पिशङ्गाक्ष कहने लगते हैं।

लंका छोडकर चले जाने के कुछ दिनों के बाद कुबेर रावण को खबर भेज देते हैं। "हे रावण! तुम्हारी दुश्चेष्टाओं से सभी लोक ऊब गये हैं। वे तेरी निंदा कर रहे हैं।" इससे रावण क्रोधमें आजाते हैं। नीति प्रबोध करने में कुबेर को अयोग्य मानते हैं। लडाई कर विमान खींच बैठते हैं।

इन कहानियों से ज्ञात होता है कि यक्षराज अपने जन्मांतरों में भी यक्षराज संबंधी शक्तियों को खोये बिना, एक भौम जीव की भाँति जीवन बिताते थे। उनके नेत्र के फूटने की कथा को एक कल्पित कथा मानकर टालना चाहें तो टाला नहीं जा सकता। पिशङ्ग लता के "यक्षाक्षि" "कुबेराक्षि" नाम आयुर्वेद शास्त्रों में वर्षों से कई दिखाई दे रहे हैं। इस प्रकार पौराणिक गाथाओं और आयुर्वेद शास्त्रों के संबंध को घनिष्ठ बनाने वाला यह संबंध कैसे टाल दिया जा सकता है? कैसे छेदा जा सकता है?

कुबेर कलिंग देश के राजा अरिंदम के पुत्र दम हो कर पैदा हुए। इससे यह स्पष्ट लगता है कि आंध्र जाति व कुबेर और कुबेर जाती का संबंध कुछ न कुछ रहा था। हाँ कुछ लोग कलिग और आंध्र को भिन्न मानते हैं। पर वे एक तरह से एक ही माँ के दो लाडले हैं। एक कहानी यह प्रचलित है कि विश्वामित्र से शाप दष्ट पुत्र आंध्र हो गये। पर यह भी स्पष्ट है कि वेद, खगोलशास्त्र प्रमुख दीर्घतम के पौत्र मामतेय भी आंध्रों की एक जाति के हैं।

"बलि की पत्नी सुधेष्णा और दीर्घतम महर्षि के संयोग से अंगराज का जन्म हुआ। इस अंगराजा के चार पुत्र हुए। १. वंग २. कलिंग ३. सिंह ४ आंध्र।" यह महाभारत और महाभागवत का कथन है। इस के अनुसार वंग, कलिंग, सिंह और आंध्र एक दूसरे के भाई हैं। एक ही पिता के पुत्र हैं। अरिंदम कलिंगों से शासित देश का राजा था। ये कलिंग दीर्घतम के वंश के हैं। अरिंदम का पुत्र था दम। वह कुबेर हो कर अलका पति आदि बन गया। अलकाधिपत्य आदि के पाने पर भी वह कलिंग ही है।

चाहे प्रारंभ की स्थिति कुछ भी हो! कलिंग और आंध्र एक ही देश हैं। यक्ष राजा कुबेर अपने सीमाप्रांत स्थित कलिंग में था। पर वह आंध्रों के भाई के नाते आंध्र में भी था। और एक स्पष्ट विषय है–अत्यंत प्राचीन काल में देवयोनि भेदजीव यक्षों से कलिंग और आंध्रों का संबंध होना। दीर्घतम महर्षि वंशी वंग, कलिंग, सिंह, आंध्रों का विषय, कलिंग के अधिपति अरिंदम के पुत्र दम या कुबेर का विषय स्वर्गीय श्री सुरवरम प्रतापरेड्डी जी के सामने नहीं आये होंगे। इसलिये उन्होंने कुछ विद्वानों के मत प्रतिबिंबित किये हैं। वे इस प्रकार हैं। "यक्ष" "अक्षस" [OXUS] नदी के किनारे रहने वाले थे या 'यछि' [YUCHI] नामक मंगोल जाति से संबंधित थे। या 'जक्षारस' [JAXARTES] के आस पास में रहने वाले होंगे"।

उपर्युक्त भाग में हमने लिखा है कि श्री दीक्षितार के अनुसार बलि चक्रवर्ती के सेनानी सुमाली ने यक्षों को पराजित किया और राक्षस राज्य की स्थापना की। विचार करने पर लगता है कि सुमाली राक्षस नहीं थे। यक्ष, गंधर्वों से इनका संबंध है। सुकेश ने ग्रामणी नामक गंधर्व की पुत्री देववती से विवाह किया। इन दोनों का पुत्र है सुमाली। सुमाली की संतान में बाला, पुष्पोत्कट, कैकसि कुंभीनस, आदि कन्यायें भी हैं। इनमें पुष्पोत्कट आदि कन्यायें नृत्यगान में प्रवीण थीं। कुबेर ने इन्हीं कन्याओं को विश्रवसु को भेंट में दिया। इस तरह सुमाली और राक्षसों का संबंध दिखाई देता है। पर हम यह नहीं बता सकते कि सुमाली ने रावण का आश्रय पाकर कुबेर साम्राज्य को राक्षसों के अधीन बनाया था। बलि के सेनानी के नाते स्वयं ही युद्ध क्षेत्र में प्राप्त किया। यह निश्चित नहीं है कि पहले वह जीता या हारा। पर उसकी एक बार विजय हुई थी और एक बार पराजय।

कन्नड भाषा के प्रसिद्ध आलोचक श्री मुलिय तिम्मप्पय्या लिखते हैं कि कुबेर ने बलि चक्रवर्ती से अपना साम्राज्य पुनः प्राप्त किया। इसीलिये कुबेर दीपावली के दिन यक्ष रात्रि मनाया करते थे। यह यक्ष रात्रि बडे जोरों पर होती थी।

यक्ष रात्रि

वात्स्यायन ने 'कामसूत्र' में यक्ष रात्रि शब्द का प्रयोग किया है। वह इस प्रकार है।

यक्ष रात्रि, कौमुदी जागरः सुवसंतकः सहकार भंजिका, अभ्यूषखादिका, विसखादिका, नवपत्रिका, उदकक्ष्वेडिका, पांचालानुयानं, एकशाल्मलीः, यवचतुर्थी,

आलोल चतुर्थी, मदनोत्सवः, दमन भंजिका, होलाका, अशोकोत्तंशिका, पुष्पावचायिका चूत लतिका, इक्षुभंजिका, कदंब युद्धानि, तास्ताश्च माहिमान्यः, देशाश्च क्रीडा जनेभ्यो विशिष्ट माचरेयुरिति संभूय क्रीडाः (१-४-४२)

इस यक्ष रात्रि का पक्ष रात्रि पाठांतर भी है। साथ ही साथ "यक्ष रात्रि" का भी स्थान है। इसे कुछ सज्जनों ने द्यूत क्रीडा के नाम से बताया है। कुछ लोगों ने इसे और कोई क्रीडा बतायी है। पर यह ठीक नहीं है। वास्तव में 'वात्स्यायन काम सूत्र' एक स्वतंत्र ग्रंथ नहीं है। नंदि, औद्धालक, श्वेतकेतु, बाभ्रव्य आदि अनेकों की रचनाओं पर आधारित है 'कामसूत्र'। पर वात्स्यायन ने एक विषय का आविष्कार नहीं किया है, वह है मोक्ष कामित्व को काम भावना मानने का आर्षकाम विज्ञान तत्व। क्रीडा शब्द ही अर्थ परिवर्तन और अर्थ विपरिणाम को पाता आया है। पहले इसका प्रयोग पवित्रोत्सव की यात्रा क्रीडाओं और पति पत्नी के, प्रियाप्रिय के शृंगार विलास प्रपूरित क्रीडाओं के लिये होता था। तब भी वात्स्यायन ने द्यूत क्रीडाओं से संबंधित नहीं माना। वैसे यशोधर आदिने इसे पहचाना नहीं। पर वात्स्यायन ने साफ साफ लिखा है कि ये क्रीडायें महिमान्वित हैं और इनका आचरण मामूली लोगों से न होकर विशिष्ट व्यक्तियों से होना चाहिये। ये क्रीडायें भी देवी देवता की आराधना से पूरित हैं। पर ये काम संबंधी नहीं हैं। हमारी राय में यशोधरने वात्स्यायन को समझा ही नहीं। यशोधर की व्याख्या के प्रारंभ से लेकर अंत तक कमियाँ ही कमियाँ दिखाई देती हैं।

यक्ष रात्रि को कुछ लोगों ने दीपावली बताया है। कुछ लोगों ने इसे कार्तिक की पूर्णिमा वताया है। दीपावली से संबंधित पौराणिक गाथाओं में यक्षों की प्रसक्ति मृग्य है। दीपावली से संबंधित कथाओं में नरकासुर वध, भगवान वामन को बलि का राज्य दान, रावण-वध के पश्चात् अयोध्या में राम का भरतमिलन, विक्रमादित्य का सिंहासना-भिषेक है। पुराणों और धर्मशास्त्रों और व्रत ग्रंथों में, अकसर नरकासुर वध की कहानी सुनाई देती है। 'मुद्राराक्षस' से विदित होता है कि कार्तिक पूर्णिमा के बदले दीपावली के दिन कौमुदी महोत्सव मनाये जाते थे। यह तो लोक विदित ही है कि विष्णु ने बलिसे तीन पग की जमीन माँगी। बलि ने दे दी। परिणामतः वे पाताल में चले गये। पर श्री तिम्मप्पय्या ने लिखा है कि कुबेर ने बलि को पराजित कर अपनी संपदा फिर से प्राप्त की। वह दीपावली का दिन था। इसलिये वह यक्ष रात्रि मान लिया गया। पर इसका कोई आधार न तो पुराणों में मिलता है, न धर्म ग्रंथों में। मंत्र-तंत्र शास्त्रों के आंतर्य का अध्ययन यह बताता है कि यक्षिणियों में तुलसी यक्षिणी बहुत शक्तिमान है। कृष्ण तुलसी से भी लक्ष्मी तुलसी को शक्तिमान बताते हैं शास्त्र। पुराने जमाने में कार्तिक पूर्णिमा क दिन तुलस्युद्वासन महोत्सव मनाया करते थे। शायद यक्ष भी पूजादि कार्यक्रमो में इनका निर्वाह किया करते थे। इसलिये हमें लगता है कि कार्तिक पूर्णिमा का नाम यक्ष रात्रि पड़ गया। जब तुलसी श्रीकृष्ण

और विष्णु के लिये पूजनीय हैं, तब अगर वह यक्षों के लिये पूजनीय है तो उसमें कोई आश्चर्य नहीं है। इस यक्ष रात्रि के दिन वे जिस नृत्यगीत का प्रदर्शन करते थे, उसका नाम 'यक्षगान' पड़ गया होगा तो कुछ भी असहज नहीं है।

तेलुगु में 'यक्ष' शब्द की विकृति है 'जक्कुलु'। 'जक्किणि' यक्षिणी की विकृति है। इस शब्द प्रयोग को सामने रखकर विद्वान सज्जनों ने यक्षगान के इतिहास की कल्पना करनी चाही। तेलुगु के कई प्राचीन कवियों ने 'जक्कुल' शब्द का प्रयोग 'यक्ष' के पर्यायवाची शब्द के रूप में किया। 'जक्कुवीडु' (जक्कुलु जाति वाला) जक्कुलरेड्ड (कुबेर) आदि शब्दों का प्राचीन कवियों ने कई जगहों पर प्रयोग किया। जक्किनि शब्द का प्रयोग कुछ लोगोंने कुबेर की पत्नी के लिये किया है। कुछ लोगों ने जाति विशेष के लिये किया है। कुछ प्राचीन कवियों ने नृत्य विशेष एवं नाट्यभेद का अर्थ भी लगाया है। विष्णु पुराण में इसका संगीत के वर्ण विशेष अर्थात् एक गीत के रूप में प्रयोग किया है।

गीतंबु दरुवु जक्किणि चिंदु मोदलुगा
नोक्कोक्क वर्णंबु नुग्गडिंचि

(वि. पु. ७.२७७)

जक्कि शब्द का अर्थ है घोडा। जक्कि शब्द का अर्थ भी है-बंध जाना। तेलुगु के प्राचीन कवियोंने 'जक्किमोर' शब्द का प्रयोग (अश्व मुखी) किन्नरों के लिये किया है। 'जक्कि ओडलु' नामक शब्द की कल्पना करने पर किंपुरुष (नरमुखी–अश्व शरीर वाले) का अर्थ भी प्रकटित होता है। 'जक्कुलु' बहुवचन है। इसका एकवचन है 'जक्कि'। यह विस्तृत व्यवहार में नहीं है। पर उसका अस्तित्व जरूर है। हमें तुंबुर आदि के इतिहास से स्पष्ट होता है कि नृत्यगान के लिये गंधर्व प्रसिद्ध अवश्य हैं, पर यक्ष किन्नर किंपुरुष भी नृत्यगान तत्वज्ञ ही हैं।

इंद्रजाल से संबंधित विषयों पर चर्चा करते हुए हम 'यक्षिणी विद्या और यक्षिणी' शब्दों का प्रयोग करते हैं। जो हमारे पास नहीं है, उसे दिखाना ही इंद्रजाल है। यक्षों की कामरूपिता इन विद्याओं का मूल है। यह बताया जा चुका है कि 'जक्क' शब्द का तेलुगु में एक अर्थ है बंधजाना। इस शब्द का मूल है यक्ष। 'यक्ष' का एक अर्थ है बांधनेवाला। विविध विद्याओं के साथ, नृत्यगान से बांध देने की, आकर्षित करने की, तन्मयता के सागर में डुबोने की कला के कारण ही उन्हें यक्ष नाम दिया गया। अगर हम कहें कि इन शक्तियों का मूल उनकी कामरूपिता ही है तो कोई विप्रतिपत्ति नहीं है। ये बडे ही शक्तिशाली थे। इसीलिये गंधर्वों ने उनसे संबंध व बांधव्य स्थापित किये। कुबेर का पुत्र नलकूबर था। अप्सरा वनिता रंभा ने उसे आकर्षित किया। यह उपर्युक्त संबंध व बांधव्य को पुष्ट करता है।

'यक्षगान' के कई अर्थ हैं। (१) यक्षों के लिये किया जानेवाला गान (२) यक्षों से किया जानेवाला गान (३) यक्षो के गान की तरह गाया जानेवाला गान।

'यक्षों के लिये किया जानेवाला गान' का अर्थ है–यक्षों को आनंदित करने के लिये किया जानेवाला गान–यक्षों की कथाओं का गान–यक्षों को आनंदित करने के लिये यक्ष गाथाओं के अलावा दूसरी गाथाओं का गायन। इस दृष्टि से यक्षों से संबंधित कोई भी गाने योग्य (गेय) प्रबंधकाव्य यक्षगान कहा जासकता है।

जक्कुलु और यक्षगान

तेलुगु के 'जक्कु' 'जक्कुलु'-'जक्किनि' 'जक्किणि' आदि, शब्दों के बारे में विचार किया जा चुका है। कुछ लोगों ने समझा कि जक्क और यक्षगानों का संबंध है। 'यक्ष' शब्द प्राकृत रूप से संजनित है। इसलिये वह जक्कुलु, के रूप में दिखाई देता है। अन्यथा संस्कृतभव रूप ही पाना चाहें तो 'एच्चुलु' के समान तेलुगु में कोई रूप निकला होगा। अनपढ लोगों के उच्चारण में 'क्ष' कार 'च्च' कार के रूप में परिणत होता है। मामूली तेलुगु आदमी राक्षस शब्दका उच्चारण 'राच्चस' के रूप में करता है। उससे भिन्न रूप में कभी उच्चरित नहीं करता। 'राकासि' और 'रक्कसि' नामक रूपों की बात अलग है। यक्षों का प्रधान धंधा था नृत्य नाटक गान आदि ही नहीं था। पद विकृतिमें अर्थ परिणाम और अर्थ विकृति सहज ही है। 'जक्कुलु' नामक जातिवाले जमाने के पहले नृत्य, गान आदि से जिंदगी विताते थे। पर वे कूचिपूडि के भागवतों की तरह कभी इसे प्रधान धंधा वनाये बैठे नहीं थे। कुछ लोगों का विश्वास है कि जक्कुलु कलावन्त कुल के हैं। पर यह ठीक नहीं है। आंध्रदेश में एक जाति है कलावंत। कलावन्त और वेश्याकुल इनमें कोई भेद नहीं है। वेश्याकुल के लोगों को ही कलावन्त का नाम दिया गया। पर किसी भी काल में इन जक्कुल और कलावन्तों का संबंध नहीं दिखाई देता। प्राचीन आंध्र कविता में हमें इसके कई आधार मिलते हैं कि जक्किणियों का नृत्यगान से संबंध है। श्री वेटूरि प्रभाकर शास्त्री ने कामेश्वरी कथा में स्पष्ट किया है कि कलावन्त या वेश्याओं में कुछ कन्यायें नृत्यगान का अभ्यास करती थीं। भगवान के लिये अपने को समर्पित कर देती थी। उन्हें देवदासी कहतेथे। इसी तरह जक्क कन्यायें भी भगवान शिव के लिये समर्पित हो जाती थीं। फिरभी हम दृढता के साथ नहीं वता सकते कि नृत्य गान संबंधों के होने मात्रसे 'जक्कुलु' नाम होने मात्र से उनका यक्षगान से संबंध है, या काव्य गान से या काव्य पठन से या नाटकों से उनका संबंध है।

कुछ लोगों का मत है कि द्रविड देश के दृश्य प्रबंध विशेष, कुरवंजि से यक्षगान का उद्गम हुआ। यह ठीक है कि कुरवंजि और यक्षगान में कुछ साम्य है। पर इसी के बल पर हम बता नहीं सकते कि कुरवंजि से यक्षगान का अवतरण हुआ। श्री वेटूरि प्रभाकर शास्त्री ने लिखा है कि आंध्र, कर्नाटक और द्रविड देश के अरण्य

प्रांतों में निवसित कुरव जाति के (अंजि-अड्डुगु पदम व कदम) नृत्य विशेष का परिणाम ही कुरवंजि है। तेलुगु में 'येरुकुल कुरवंजि' है। कुछ लोगों ने इसे यदुकुल कुरवंजि मान लिया है। चाहे यह यदुकुल हो या येरूकुल* कुरवंजि (या यक्षगान) यक्ष या जक्कु, येरुकुल या यदुकुल तक ही सीमित नहीं है। कुरवंजि एक आटविक जाति से आविर्भूत है। तो उसे येरुकुल नामक आटविक जाति तक व्याप्त माना जा सकता है। पर यदुकुल तक व्याप्त नहीं माना जा सकता। यदुवंशी आटविक नहीं हैं। ये नृत्यगान केवल यक्षों तक ही सीमित नहीं हैं। चाहें वे कोई भी नृत्यगान हों, येरुकुल, यानादि आदि (एक पिछडी जाती) तक व्याप्त हैं। इन जातियों के इतिहास हमें वताते हैं कि वे अनादि काल से वेष धारणकर गाने गाते हुए नाचते थे। इससे हमें मालूम होता है कि ये नृत्यगान यक्षों तक ही परिमित नहीं हैं। हमें एक दो विषयों का अच्छा ध्यान रखना चाहिये। हमें सबसे पहले संदेह होता है कि कुरवंजि जातिपरक है या रागपरक है। मार्ग संगीत के २९वें मेलकर्ता धीरशंकराभरण राग से कुरंजि नामक राग पैदा हुआ। इस राग के आरोहण और अवरोहण इस प्रकार हैं।

आरोहण–स, नि, स, रि, ग, म, स, ध
अवरोहण–ध, प, म, ग, रि, स, नि, स

संगीत शास्त्री इसे धैवतांत्य रागों के एक सुंदर उदाहरण के रूप में स्वीकार करते हैं। इसी तरह ३९ वें मेलकर्ता 'झालवरालि' जन्य 'कुरंजि विजय' नामक और एक राग है। इसके आरोहण और अवरोहण इस प्रकार हैं।

आरोहण–स, रि, म, ग, रि, म, प, ध, स
अवरोहण–स, नि, ध, प, रि, स,

'कुरुझंपे' नामक एक ताल है। वह एक दृत-एक खंड लघु, एक त्रिश्रलघु, से मिश्रित है। इसी पर आधारित होकर यक्षगानो में 'कुरुच झंपे' नामक एक ताल का उपयोग करते हैं। यक्षगानों में प्रयुक्त 'एरुकुल झंपे' नामक ताल का उपरोक्त ताल से संबंध है। कुछ लोग इसे एरुकुल मानते हैं। और कुछ लोग इसे यदुकुल मानते हैं। एक राग और है–उसका नाम है एरकल कांभोजि या 'एरुकुल' कांभोजि। यक्षगानों से संबंधित इन राग तालों का परिशीलन करने पर लगता है कि 'कुरवंजि' नाम जातिपरक न होकर संगीत शास्त्रपरक है। 'कुरंजि' शब्द 'कुरवंजि' वन गया तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं है। एक दरु एक नृत्य गीत बनकर क्रमशः कुछ दरुओं के साथ काव्यों की तरह चल पडी होगी। धीरे धीरे वह कथा के रुप में आगे बढकर विविध राग ताल बद्ध दरुओं के साथ रूपकों की तरह यक्षगान नाटक निकला है। इसी प्रकार कुरंजि

* एरुकुल एक जाति का नाम है।

राग से कीर्तन, गान, नृत्य आदि निकल पडे। वही कथापरक होकर अंत में कुरवंजि यक्ष गान की तरह एक नाटक बन बैठा होगा। 'येरुकुल' शब्द से संबंधित राग, ताल आदि का यक्षगानों में प्रयोग और यक्षगानों में 'कुरवंजि' पात्र का आविर्भाव देखते हैं तो लगता है कि यह कोई जातिपरक वस्तु नहीं है। साथ ही साथ यह भी बताया नहीं जा सकता कि जाति विशेष के साथ चलकर इसने विस्तृत व्याप्ति पायी हो। यक्ष प्रिय रागपरक रचना यक्षगान बन बैठा। कुरवंजि रागपरक रचना 'कुरवंजि' बन बैठी। यक्षों का विषय छोड दीजिये और देखिये तो साफ साफ जँचता है कि वे किसी एक जाति विशेष से संबंधित नहीं हैं। हम दृढता के साथ बता नहीं सकते कि इनका संबंध जक्कुलु या यानादि (एक पिछडि हुई जाति) नामक जातियों से ही है। दूसरे आदमियों और जातियों का भीं इससे संबंध है। हमें इसका कोई आधार नहीं मिलता कि यानादि और जक्कुलु ही यक्षगानों को गाते और नाचते थे। यह बिलकुल निश्चित है कि उपर्युक्त जातियाँ भी इसमें भाग लेती थीं।

मार्गी-देशी

बहुतेरे विद्वानों ने मान लिया है कि 'यक्षगान' देशी रचना ही है। मार्ग रचना अर्थात् संस्कृत में उद्भूत रचना नहीं है। पर इसका निर्णय इतना सरल नहीं है। भाषा के विषय में भी देशी और मार्ग का भेद मिटता जारहा है। जितना ही अनुसंधान करते जाते हैं, उतना ही वह भेद अदृश्य होता जारहा है। 'देशी' का व्यक्तित्व टिक नहीं पा रहा है। मार्ग, देशी शब्दों का प्रयोग सबसे पहले संगीत नाट्यों के विषय में तत्संबंधी शास्त्रों में हुआ है। ब्रह्मा ने परमेश्वर के सामने एक नाट्य का प्रदर्शन किया। इसे प्राचीनों ने मार्ग-संगीत-नाट्य मान लिया है। फिर देशी क्या है? इसका जवाब इस प्रकार है—देशी जनता ने जिस रचना का निर्माण किया, जिस संगीत और नाट्य की रचना की वही देशीय या देशी माना जाने लगा। पर इनका मूल भी परमेश्वर प्रबोधित विद्यायें ही हैं। प्रश्न यह है कि ब्रह्मा की सृष्टि मार्गी मानी गयी, जनता की सृष्टि देशी हुई तो परमेश्वर से सृजित रचनाओं को कौन सा नाम दिया जाय? पता नहीं लगता कि इसे प्राचीनों ने मार्गी देशी के अलावा तीसरे नाम से क्यों नहीं व्यवहृत किया? जब हम गहराई तक जाते हैं तो समझ में आने लगता है कि परमेश्वर की सृष्टि को देशी के रूप में प्रचार में लाया होगा। इसीलिये तेलुगु शैव कवियों ने देशी रचना के निनाद को बुलंद किया। देशी रचना के प्रति अनुराग बढा लिया। जो कुछ भी हो—खोज से यही समझ में आता है कि मार्गी और देशी रीतियों में कोई अंतर नहीं है। देशी से संबंधित कोई भी वस्तु मार्गी से भिन्न नहीं है। इस विषय पर लेखक ने 'मार्ग-देशी' नामक ग्रंथ में विपुल रूप से चर्चा की है। छंदों विधान की दृष्टि से मार्गी व देशी का कोई भेद ही नहीं है। मार्गी छंदों में (उद्धुरमाला वृत्त आदि

के अलावा) संजनित सम-अर्धसम, विषम वृत्तों की संख्या १३५ १०८ २७३ ९८९ २७२ ३१४ है।*

संगीत की दृष्टि से भी मार्ग देशी भेद के लिये कोई स्थान नहीं है। कुछ संगीत शास्त्रज्ञों ने लिखा है कि देशी प्रबंध का तात्पर्य देशी संगीत से संबंधित एक संगीत रचना है। 'देशी ताल' का तात्पर्य है देशी संगीत से संबंधित ताल। फिरभी हर कोई संगीत का विद्वान महसूस करता है कि देशी संगीत मार्गी संगीत में अंतर्लीन हो गया। देशकार-देशीय तोडि - देशीय रागम्-देशी रागम् आदि देशी संगीत के राग माने जारहे हैं। पर उनमें भी अमार्गी तत्व दिखाई नहीं देता। दक्षिणापथ में जिसे कापीराग माना गया, उसे उत्तरापथ के लोगोंने देशीय राग मान लिया है। जब हम देशी रागों और मार्गी रागों की तुलना करते हैं तो समझ में आने लगता है कि देशी राग व्यवस्था का अस्तित्व स्वतंत्र नहीं है। देशकारि, देशख, देशरव्य, देशदेशकारव्य, देश मुखारि, देश रंजनि, देशलगौड, देशवरालि, देशवाल, देश्य अंधाली, देश्य कमासु, देश्य कल्याणी, देश्य कानड, देश्यकापि, देश्यगान वारिधि, देश गौरि, देश्य गौल, देश्य तोडि, देश्य नाटकुरंजि, देश्य नारायणि, देश्य बंगाला, देश्य ब्यागड, (देश्य बेगड) देश्य मनोहरि, देश्य मारुव, देश मुखारि, देश्य राग, (देश्य रेगुप्ति) देश्य रेवगुप्ति, देश्य श्री, देशवालि, देशाक्षि, देशाक्षरि, देशिक तोडि, देशिक देवगान, देशिक बंगाल, देशिक रुद्रि, देशि किन्नरि, देशिनी आदि सभी राग मार्ग संगीतजन्य राग ही हैं। हाँ इनके प्रारंभ में देश, देश्य, देशी शब्द अवश्य लगे हैं। क्रिया ताल आदि प्रतीकात्मक शब्दों में यह देशी शब्द मार्गी लक्षणों का चिलबिन बैठा। "देश्य क्रिया" देशी पद्धति के तालांगों से संबंधित एक क्रिया मानी जा सकती है। पर देश्य क्रियाष्टक को स्वीकार करने निकलते हैं तो मार्गी मार्ग को टाल नहीं पाने वाले ध्रुवक, सर्पिणी, कृष्य, पद्मिनी, विसर्जित, विक्षिप्त, पताका, पतिता नामक शब्द रहित अंगाभिनय की तालांग क्रियायें देशी विशिष्टता को निस्संदेह दूर कर देती हैं।

मार्गी संगीत में कई नामों के लिये मार्ग शब्द का उपयोग हुआ है। मार्ग ताल कला—मार्गक्रिया - मार्गभद्र - मार्गशुद्ध आदि शब्दों का प्रयोग भी सहज है। मार्गपरक एवं १५ वें मेल कर्ता 'माया मालव गौल राग' से जनित राग एक है। इस जन्य राग के

आरोहण और अवरोहण इस प्रकार हैं :

आरोहण – स, रि, ग, प, ध, स
अवरोहण – स, ध, म, प, ग, रि, स

औडव-वक्र-षाडव राग से संबंधित यह राग मार्गपरक होते हुए प्राचीनों से मार्ग देशी बताया गया है इससे स्पष्ट होता है कि देशी नामक कोई विशिष्ट व्यवस्था नहीं है। बल्कि वह मार्गपरक व्यवस्था का एक अंतर्भाग ही है।

* लखक ने १५ व २१ आगस्त १९६० ई. स. के आंध्र प्रभा (तेलुगु दैनिक) में इसे साबित किया है

इसका यही तात्पर्य है कि देशी रचना के किसी विशेष वर्गीकरण की कोई गुंजाइश नहीं है। तेलुगु के शैव कवियों की रचनाओं को देशी रचना मानते हैं। पर नन्नय्या आदि तेलुगु के अन्य महान कवियों की रचनायें भी देशी कविता की श्रेणी में ही आती हैं। संस्कृत से भिन्न सभी देशी भाषाओं की रचनाओं को देशी कविता के नाम से व्यवहृत किया जा सकता है। किया भी जानी चाहिये। पर जैसे कि कुछ विद्वनों ने माना है यक्षगान की रचना-प्रक्रिया केवल देशी रचना ही नहीं है। *

संस्कृत यक्षगान काव्य

संस्कृत के काव्यों में यक्षगान के समर्ह कोई कृति है तो सबसे पहले वह वाल्मीकि कृत रामायण है। यक्षगान काव्य का तात्पर्य है वह काव्य जो यक्षों के गान की तरह गाया जा सके। गान गंधर्व मूलक है। गंधर्व यक्षों से भी गायन में अत्यधिक हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यक्षगान से भी गंधर्व गान उत्कृष्ट है। वाल्मीकि कृत रामायण गंधर्व गान की प्रज्ञा से समन्वित है। गाने के बिलकुल योग्य है। इस उत्तम श्रेणी की रचना को यक्षगान माना जाय तो कोई भूल चूक नहीं है। अतीत में किसीने रामायण को यक्षगान के रूप में मान्यता नहीं दी है। पर गान काव्य के रूप में कुछ लोगों ने जरूर पहचान लिया है। रामायण बहुशास्त्र ग्रंथ है। आर्ष पद्धति से भिन्न सव्य ग्रंथ के रूप में अवतरित व्यास महर्षि के महाभारत को शास्त्र समुच्चय के स्वरूप में हमारे प्राचीन आचार्यों ने स्वीकृत किया है। रामायण तो आर्ष पद्धति में अपसव्य ग्रंथ के रूप में अवतरित रचना है। इसे लक्ष्य लक्षण महितान्वित बहुशास्त्र ग्रंथ के रूप में स्वीकार करने पर किसी को कोई आपत्ति नहीं होगी। वाल्मीकि महर्षिने रामायण को षट्च्छास्त्र सम्मित बनाया है। पर इस रहस्य को पहचानते हुए अभी तक कोई दिखाई नहीं देते। हमारे इस सम्मित शब्द का तात्पर्य है 'मिलाहुआ' फिर रामायण के काव्यपरक कथा संकलित अर्थ के अलावा षट्च्छास्त्रपरक छे अर्थ निकलते हैं। छे प्रकार के अर्थों की व्याख्या के लिये हमें सही रामायण को बाहर निकालना होगा। प्रस्तुत रामायण का पुनस्संकलन करना होगा। पुनः संस्कार करना होगा। उसका प्रकाशन करना होगा। वाल्मीकि रामायण के छे अर्थ होंगे। तर्क, धर्म, वैद्य, ज्योतिष, व्याकरण, गंधर्व-वेद–इन सभी शास्त्रों के अलग अलग अर्थ रामायण के श्लोकों में निहित हैं। संगीतपरक शास्त्रीयता तो सुस्पष्ट है। †

---

* मार्ग देशी रचना व्यवस्था पर लेखक ने 'जानु तेनुगु' (ठेठ तेलुगु) एवं मार्ग देशि कवितलु नामक ग्रंथों में विपुल रूप से चर्चा हुई है।

† स्थल विस्तार के भय से अन्य शास्त्र मूलक विषयों का निरूपण छोडकर, संगीतपरक विषयों का ही उल्लेख कर रहे हैं।

पाठ्ये गेये च मधुरं प्रमाणैस्त्रिभिरन्वितम्
जातिभिस्सप्तभिर्बद्धं तंत्रीलयसमन्वितम् ।
हास्य श्रृंगार कारुण्य रौद्र वीर भयानकैः
बीभत्साद्भूत संयुक्तं काव्यमे तदगायताम् ।।

तौतु गांधर्वतत्वज्ञौ
मूर्छना स्थान कोविदौ
भ्रातरौ स्वर संपन्नौ
गंधर्वाविव रूपिणौ ।।

वाल्मीकि ने यह स्वयं ही वताया है। स्पष्ट किया है कि रामायण की रचना का मूल 'मानिषाद' है, जो कि यादृच्छिक रूप से अवतरित हुआ है। वाल्मीकि ने यह भी स्पष्ट किया है कि 'मानिषाद' वाला श्लोक भी ('पादवद्धोक्षर समस्तंत्रीलय समन्वितः') के अनुसार गान योग्य है। संपूर्ण रामायाण पठन योग्य हो बैठा है। मधुरता के साथ गाने लायक है। त्रिविध प्रमाणों से लय समन्वित है। स रि ग म प ध नि स नामक सप्त जातियों से वद्ध होकर गेय काव्य के रूप में प्रसिद्ध हुआ है। रामायण शब्द-अर्थ-राग प्रमाणों के साथ, वेद-धर्म-पुराण प्रमाणों के साथ और तर्क-योग-वेदांत प्रमाणों के साथ परिपूर्ण है। इससे यह भी स्पष्ट है कि रामायण एक ही राग, एक ही ताल, एक ही लय के साथ गाने की नहीं है। हास्यादि विविध रसों से प्रपूर्ण इस काव्य के बारे में कैसे बता सकते हैं कि यह एक राग में गाने योग्य है। संगीतज्ञ की बात तो छोडिये-कोई मामूली श्रोता भी यह नहीं मानेगा कि हर कोई घटना—चाहे वह किसी भी रस से संबंधित क्यों न हो—एक ही राग में गायी जानी चाहिये। महर्षि का भाव था कि यह रस के अनुकूल, भावना के अनुकूल, विविध राग तालों से गायी जानी चाहिये। सप्त स्वरों के आरोहण अवरोहण का नाम है मूर्छना। षड्ज-मध्यम-गांधार ग्रामों के सात मूर्छनाओं के हिसाब से २१ मूर्छनायें होंगी। प्रस्तुत व्यवहार में चतुर्दश मूर्छनायें गांधर्व रहित हैं। पर यह तो नहीं कहा जा सकता कि वाल्मीकि के काल में भी ये ही व्यवहृत थे। हम यह भी नहीं बता सकते कि गांधर्व तत्वज्ञ, विविध मूर्छना स्थान कोविद कुशलवने एक ही राग, ताल और लय में रामायण का गान किया है। यह कहना ठीक न होगा कि महाशास्त्रज्ञ, त्रिकालज्ञ, गंधर्व-वेद-तत्वज्ञ एवं रसज्ञ महर्षि महाकवि वाल्मीकि ने एक ही राग-ताल-लयबद्ध रचना संस्कृत में की थी। हमें यहाँ और एक विषय जान लेना चाहिये। रामायण को हमने षट्शास्त्र सम्मित मान लिया है। कोई भी शास्त्रीय ग्रंथ केवल लक्षणबद्ध ही नहीं रहेगा। लक्ष्यबद्ध भी होता है। वाल्मीकि रामायण गांधर्व लक्षण ग्रंथ ही नहीं है, बल्कि लक्ष्य संबद्ध लक्षण ग्रंथ ही है। हमें पता नहीं है कि लवकुशने कितने राग, ताल और लय से रामायण का गान किया था। स्वयं वाल्मीकिने लवकुश को कितने ही रागों की शिक्षा दी! रामायण का यक्ष, गंधर्व, किन्नर किंपुरुषों ने मधुरातिमधुर रागों में गान किया होगा।

इस तरह वाल्मीकि रामायण किन्नर गान काव्य है। किंपुरुष गान काव्य है। गंधर्व गान काव्य है। यक्ष गान काव्य है। रामायण के बाद काव्य लिखने वाले वाल्मीकि जैसे महर्षि नहीं हैं। महाकवि भी नहीं हैं। वाल्मीकि की भाँति बहुल शास्त्रज्ञ भी नहीं हैं। वाल्मीकि जैसे ब्रह्मज्ञ भी नहीं हैं। इसीलिये वाल्मीकि जैसे काव्य की और कोई रचना नहीं कर सके। जैसे कि स्वयं वाल्मीकि ने बताया है "पाठ्ये गेये च मधुरं प्रमाणैस्त्रिभिरन्वितं-जातिभिस्सप्तभिर्बद्धं तंत्रीलय समन्वितम्" है। व्यास महर्षि का महाभारत बहुशास्त्र सम्मत है, पर गांधर्व सम्मत या सम्मित नहीं। फिर बाकी रचनाओं की बात क्यों करें?

हमारे पास जो साहित्य है वह खाली प्राप्त साहित्य ही है। ऐसी अनेक रचनायें हैं जो अलभ्यमान हैं, इन अलभ्यमान ग्रंथों में कई यक्षगान काव्य थे। गान योग्य काव्य होकर भी रोशनी नहीं पा सकें। लभ्यमान ग्रंथों में जयदेव कवि प्रणीत गीत-गोविंद एक उत्तम यक्षगान काव्य है। संस्कृत कवि पंडितों और कवियों ने इसे यक्ष-गान काव्य नहीं बताया है। विविध वृत्त गीतों से यह यक्षगान काव्य सर्गों में विभजित है। पर (यक्ष) गान काव्य ही माना जाता है। पर संगीतज्ञ इसे यक्षगान काव्य मानते हैं। तेलुगु यक्षगानों में पद्यों के साथ विविध कीर्तन, ध्रुव, धवल, पद आदि लिखे जाते हैं। इसी पद्धति में संस्कृत में गीत गोविंद की रचना हुई है।

श्रीगीत गोविंद में विविध श्लोकों के बीचबीच में धवल, मंगल, भ्रमरपद वर्णित हुए हैं। फिर दो गीत और सत्रह ध्रुव, रचे गये हैं। मात्राच्छंदोबद्ध हैं ये धवल, भ्रमर, ध्रुव, गीतिकादि। तेलुगु यक्षगानों की तरह ये विविध राग-ताल युक्त रचे गये हैं। श्रीगीतगोविंद सुप्रसिद्ध है, पर आश्चर्य की बात है कि तेलुगु के यक्षगान काव्य के समान संस्कृत में उद्भूत यक्षगान काव्य के रुप में इसे पहचाना नहीं गया है। इसके प्रणेता श्रीजयदेव कवि हैं। ई.स. १०८० से ११४० तक का समय श्रीजयदेवका जीवन काल है। ११वीं शताब्दी के अंतिम चरण में वंग राज्य के राजा लक्ष्मण सेन के दरबार में आप थे। श्रीजयदेव कवि उत्कल प्रांत के हैं। वे जगन्नाथ मंदिर के आसपास के गाँव में पैदा हुए। आपने कलिंग और आंध्रज यक्षगान काव्यों की तरह श्रीगीत गोविंद की रचना की है। श्रीगीत गोविंद के बाद ऐसी रचनायें संस्कृत में बहुत निकली होंगी। पर वे अब प्रकाश में नहीं हैं। ई. स. १३२० के आसपास में भानुदत्त ने, गीत गौरीश, नामक एक यक्षगान काव्य की रचना की। श्रीगीत गोविंद की रचना रीति में इसकी रचना हुई। इस काव्य में वृत्त-त्रिपद (अष्टपद के बदले त्रिपद का प्रयोग हुआ) की रचना की। इससे समझ में आता है कि वर्तमान आलोचक जिसे यक्षगान काव्य रचना का काल मानते हैं,उससे पहले ही संस्कृत में श्रीगीत गोविंद आदि यक्षगान काव्य निकले हैं। और एक विशेषता यह है कि श्रीगीत गोविंद की तरह तेलुगु में त्यागराज आदिने 'सीताराम विजयम', 'नौका चरित्र', 'प्रह्लाद भक्ति विजयम' आदि यक्षगान जैसी

रचनायें की है। पर यक्षगानों के रूप में इनकी गणना नहीं हुई है। चाहे श्रीगीत गोविंद का यक्षगान के रूप में उल्लेख हुआ हो या नहीं, वह यक्षगान ही है।

तेलुगु के यक्षगान

मात्रा बद्ध एवं गणसमकबद्ध विविध छंदों में विरचित रचनाओं के साथ तेलुगु में पहले यक्षगान, काव्य के रूप में ही लिखा जाता था। तेलुगु कवि पाल्कुरिकि सोमनाथ के अनुसार ई. स. १००० के आसपास में ही यक्षगान काव्यों की रचना तेलुगु में हुआ करती थी। प्रश्न यह है कि उन दिनों की रचनायें क्या हो गयीं ? कहा नहीं जा सकता कि नन्नय्या और तिक्कना के बीच के काल में शैवेतर वाङ्मय रचा नहीं गया। इन दो सौ सालों में कितनी ही रचनायें रची गयी होंगी और काल के प्रवाह में बह गयी होंगी। शैवेतर साहित्य की ही तरह तेलुगु के प्रारंभिक यक्षगान भी काल के प्रवाह में बह गये होंगे। गीत गोविंद एकही पात्र से परिमित है। पर नृत्यगान, और विविध वाद्यों की सहायता से इसका गान होता था। गायक पैरों में नूपुर बांध कर, हाथों से ताल देते हुए नाचा करता था। चूंकि यह संस्कृत काव्य था, तेलुगु में इसकी व्याख्या होती थी। पर तेलुगु यक्षगानों के गाते समय तेलुगु में तात्पर्य विवरण होता नहीं था। ये पहले काव्य के रूप में थे। फिर धीरे धीरे नाटक के रूपमें आ गये। प्रदर्शन के योग्य रूपक का रूप इन्हें मिल गया। पाल्कुरिकि सोमनाथ के समय तक ऐसा परिवर्तन अपना स्थान बना चुका था। "प्रच्छन्न वेषधारण कर (गंधर्व, यक्ष, विद्याधर आदि बनकर गाने नाचने वालों की तरह) नाचा गाया करते थे।" यह सोमनाथ का ही वर्णन है। यहाँ पर और एक विषय ग्रहणयोग्य है। यक्षगान के सभी आलोचकों ने 'पंडिताराध्य चरित्र' नामक काव्य का "ఆదట గంధర్వ....దులు కాడు నట్లు आदट गंधर्व....दुलु काडु नट्लु" नामक पाद ही स्वीकृत किया है। पर सोमनाथ ने जिस विषय का उल्लेख करना चाहा, वह उन पादों तक ही सीमित नहीं है। सोमनाथ ने उपर्यक्त पाद के बाद ही लिखा है कि गंधर्व आदि का वेषधारण कर नाच गान करनेवाले लोगों की भाँति प्रच्छन्न वेष धारण कर ये लोग नाचा करते थे। सोमनाथ ने यह भी लिखा है कि उनसे पहले ही नाटकों के प्रदर्शन करनेवाले थे।

प्रमथ पुरातन पट्ु चरित्रमुलु
क्रम मोंद बहु नाटकमु लाड्ु वारु

सोमनाथ ने यहाँ स्पष्ट ही लिखा है प्रमथ आदि प्राचीन कथाओं का नाटक खेलते थे।

कवि सोमनाथ ने यह भी साफ साफ लिखा है कि इन नृत्य नाटक आदि के परदे होते थे। परदे के पीछे से पात्रधारी और वेषधारी बाहर आते थे। अभिनय करते थे। कवि सोमनाथ ने "शिरमुननुरमुन" से लेकर "पुष्पमालिकल दाल्चि" तक और कई जगहों पर वेषों का वर्णन किया।

अनुकूल विविध वाद्य सम्मेलनमुन
नार्भटंविच्चि योय्यन जवनिकल
गर्भंबु वेडलि यक्कजमु वट्रिल्ल
नाटकमुंदर नभिनयं बोलय

परदे के पीछे से इसमें अनुकूल विविध वाद्यों से बाहर आकर नाचते थे।

वेंडियु भवु बहुविध चरित्रमुल
खंडितगति नाटकंबुलाडुचुनु

इस प्रकार सोमनाथ कविने नाटक खेलने का और एक बार जिक्र किया है। इन जवनिका और नाटकों को नाटक न मानकर कोई "तोलु बोम्मलाट" (चमडे के खिलौनों का खेल) से संबंधित मानते हैं तो वह गलत ही सिद्ध होगा।

भारतादि कथल जीरल मरुगुल
नारंग बोम्मल नाडिंचु वारु

यहाँ पर सोमनाथ कविने 'तोलु बोम्मलाट' का प्रत्येक वर्णन किया है। बीस पृष्ठों में सोमनाथ ने शिवरात्रि के उत्सवों में निर्वहित कला संभरित विनोद कार्यक्रमों का कई द्विपदों में वर्णन किया है। इन बीस पृष्ठों में ताल पत्र की विभिन्न प्रतियों में गलतियों की भरमार है। कई पाठांतर भी हैं। विदूषकों के साथ विविध प्रकार के वेषधारियों और विविध भाषा-भाषी पात्रों का वर्णन किया है कविने

करमुब्बुचुनु जोल्लु कारिचिकोनुचु
सरसंबुलाडुचुचप्पट लिडुचु

कवि ने विविध प्रकार के अभिनय, विविध प्रकार के वाद्य आदि का भी वर्णन किया है। गलतियों से भरे हुए इन पाठों में शायद यक्षगान शब्द भी प्रयुक्त था, पर अंधकार में चला गया होगा। इसके लिये सोमनाथ कविके 'पंडिताराध्य चरित्र' का संशोधन किया जाना चाहिये। जो कुछ भी हो, यह साफ साफ बताया जा सकता है कि तेलुगु में यक्ष गान काव्य और नाटक अत्यंत प्राचीनकाल में ही लिखे गये थे। जैसे कि श्री राघवन ने बताया है, संस्कृत के उपरूपकों के आधार पर उन्हें ही आदर्श बना कर यक्ष गान नाटक तेलुगु में लिखे गये थे। संस्कृत उपरूपक गेय और नृत्य रूपक के रूप में प्राचीन

काल में ही लिखे जाते थे। इसी कारणवश 'काव्यानुशासन' व भावप्रकाशकार ने उपरूपकों को गेय रूपक और नृत्य प्रकार का नाम दिया है। उन दिनों में कुछ लोग इन्हें गेय रूपक और नृत्य प्रकार के नामसे पुकारते थे। इसीलिये यह माना जा सकता है कि बिना किसी विशेष लक्षण के ही केवल आदर्श अनुकरण से गेयनृत्य उपरूपकों को आधारित बनाकर तेलुगु में यक्षगान नाटकों का क्रमिक विकास हुआ। फिर हमें यह नहीं समझना चाहिये कि यक्षगान की साहित्यक विधा ऐसी विनूत्न देशी साहित्यक विधा है जो संस्कृत में नहीं है। *

सत्रहवीं सदी में मद्रास राज्य के तंजाऊर पर चोलनायक और मराठा राजाओं का शासन था। तंजाऊर के राजा साहित्यकार और कवि थे। उनके दरबार में कई कवि और कलाकार थे। सत्रहवीं सदी तक नायक वंश के राजा तंजाऊर के शासक थे। इन शासकों के आश्रितों की अगणित रचनायें आज भी तंजाऊर के सरस्वती महल में सुरक्षित हैं। तंजाऊर के तेलुगु राजाओं में एक हैं विजयराघव नायक। आपने अधिकतर यक्षगानों की रचना से साहित्य के इतिहास में एक विशिष्ट स्थान प्राप्त किया। नायक वंशी राजाओं के बाद तंजाऊर पर मराठा शासकों का राज्य चला। मराठा शासकों ने भी साहित्यकारों और कवियों को आश्रय दिया। इन मराठा शासकों में श्री शाहजी (द्वितीय) प्रप्रमुख हैं।

श्री शाहजी द्वितीय का काल ई. स. १६८४ से लेकर १७११ तक का था। आप स्वयं कवि और पंडित थे। अनेक कवियों के आश्रयदाता भी थे। कई भाषाओं के आप मर्मज्ञ भी थे। शाहजी महराजके बारे में अब तक कई इतिहासकार समझते आये कि विजयराघव नायक के बाद शाहजी महराज राजा बने, जो कि कवि और कवियों के आश्रयदाता हैं। पर यह सच नहीं है। खोज से मालूम पडता है कि विजय राघव के बाद छत्रपति शिवाजी के पिता शाहजी (जिन्हें शाहजी प्रथम कहा जा सकता है) तंजाऊर के शासक हुए। फिर उनके बाद शाहजी की दूसरी पत्नी का लडका और छत्रपति शिवाजी के सौतेले भाई एकोजी तंजाऊर के राजा हुए। एकोजी का लडका है शाहजी। ये एकोजी के बाद तंजाऊर के शासक बने। (सुविधा के लिये इन्हें शाहजी द्वितीय बताया जा सकता है।)

कई इतिहासकारों ने लिखा है कि दाक्षिणात्य आंध्रसाहित्य, नायक राजाओं के बाद शाहजी, शरभोजी आदि महराष्ट्र राजाओं से परिपोषित हुआ। कई लोगों ने समझा था कि विजय राघव भूपाल के वीर मरण के बाद तंजाऊर, महराष्ट्र राजाओं के कब्जे में आ गया और उस समय के शासक एकोजी के पुत्र शाहजी आंध्र, संस्कृत आदि

* जो कुछ भी हो, तेलुगु और अन्य भाषाओं में कई यक्षगान काव्य नाटकों की रचना हुई है। दक्षिण भारत के तंजाऊर राजावों के शासनकाल में यह साहित्य सृष्टि हुई है।

भाषाओं में स्वयं कवि और पंडित थे। आपने कई ग्रंथों की रचना ही नहीं की, बल्कि अनेक कवियों और पंडितों और कलाकारों का आदर भी किया। कला सरस्वती का परिपोषण किया। तंजाऊर के नायक राजाओं में अंतिम राजा श्री विजयराघव भूपाल ने ई. स. १६३३ से लेकर ई. स. १६७३ तक शासन किया था। यह बिलकुल सच है कि ये नायक राजा स्वयं कवि और पंडित थे। साथ ही साथ इन्होंने कवि, पंडित और कलाकारों के पोषक के रूप में कला और साहित्य की अमूल्य सेवा की। यह एक अलग विषय है कि यह क्षीणयुग और हीनयुग के नाम से तेलुगु साहित्य के इतिहास में प्रसिद्ध है। इतिहास और साहित्य के आलोचकों का यह मत बना हुआ है कि नायक राजाओं के शासन में जैसे कला और साहित्य का परिपोषण हुआ, वैसे ही, तत् पश्चात् स्थापित महराष्ट्र राजाओं के शासन में भी अनुस्यूत और अविच्छिन्न रूप में कला और साहित्य का परिपोषण हुआ। पर यह ठीक नहीं है। कुछ लोगों ने यह भी व्यक्त किया है कि एकोजी और दीपांबिका के पुत्र शाहजी ने सन् १६८४ से ई. स. १७१२ के मध्यकाल में तंजाऊर पर शासन किया है। साथ ही साथ उन्होंने यह भी लिखा है कि ये शाहजी सन् १६८० के आसपास में तंजाऊर चले आये थे। तेलुगु भाषा सीख ली थी और ई. स. १७०४ के लगभग पुस्तक रचना की होगी। इस में कोई सचाई नहीं है। ई. स. १६८४ से लेकर १७१२ तक के मध्यकाल में तंजाऊर के शासक बनकर तेलुगु आदि भाषाओं में कई रचनायें करने वाले शहाजी अपने नाम से महराष्ट्री जरूर हैं, पर सचमुच वे आंध्र ही हैं। इस शहाजी के दादा, परदादा महराष्ट्री हैं। हम इस का निराकरण नहीं कर पायेंगे। पर शहाजी, शरभोजी और तुक्कोजी नामक इन तीन भाइयों को हम मराठी कह नहीं पाते। फिर तुक्कोजी के पश्चात् के राज्य पालक उनके वंशी पुत्र पौत्र आदि सभी लोग आंध्रवाले ही होंगे, कदापि महराष्ट्र वाले नहीं।

राष्ट्रीयता और देशीयता के निर्णय में प्रधान रूप से मातृत्व की परिगणना ही होगी। इसीलिये किसी की स्वभाषा के विषय में जानकारी पाने के लिये पूछा जाता है कि उनकी मातृ भाषा कौन सी है? संतान की प्राप्ति के बाद उस संतान से माता का नित्य सान्निहित्य होता है, पिता का नहीं। बच्चे को पालने पोसने में, खिलाने पिलाने में, नहलाने धुलाने में माँ का जितना हाथ होता है, उतना पिता का नहीं। सृष्टि व्यवस्था ही इस विषय में माँ के अनुकूल है। इसी नित्य सान्निहित्य के कारण बच्चे माँ से ऊँ ऊँ से लेकर माता पिता, नाना नानी आदि कई साधारण शब्द सीख लेते हैं। बाद में कुछ भी हों–पर प्रारंभ में बच्चे माता की भाषा और उस भाषा की तुतली शब्दमाला को माँ के मुंह से सुनकर ही सीख लेते हैं। माँ को जो मालूम नहीं है, वह तो बच्चों को सिखाया नहीं जा सकता। माँ जो जानती है, उसे वह बच्चों को सिखाती है। इसीलिये माँ की जो भाषा है, वही बच्चों की मातृभाषा है। यह एक सामान्य विषय है। हमें और एक विषय का भी ध्यान रखना चाहिये। मान लिजिये–एक आंध्र भाषी व्यक्ति

एक तमिल भाषी युवती से ब्याह कर लेता है और आंध्र प्रदेश में अपना स्थिर निवास बना लेता है। इनकी संतति के लोग आंध्र वाले होंगे या तमिल वाले ? हम मानलेंगे कि माँने बच्चों को कुछ तमिल और कुछ तेलुगु शब्द सिखाये हैं। उन बच्चों की माँ जितना तमिल जानती है, उतना तेलुगु नहीं जानती। ऐसी संतान को कौन सा नाम दिया जाना चाहिये ? तमिल या आंध्र। एक तमिल भाषी ने तेलुगु भाषी स्त्री से विवाह किया और आंध्र प्रदेश में अपना स्थिर निवास बना लिया। इन दोनों की संतान आंध्र जाति की होगी या तमिल जाति की ? इसी प्रकार एक आंध्र भाषी ने तमिल भाषी स्त्री से ब्याह किया और तमिल भाषीने आंध्र युवती से ब्याह किया। इन चारों व्यक्तियों ने तमिल देश में स्थिर निवास बना लिया। फिर इन की संतान किस जाति की होगी ? तमिल जाति की या आंध्र जाति की? मानव हमेशा इसी प्रयत्न में रहता है कि वह अपने आसपास के प्रांतों में जो आदरणीय और गौरवप्रद आचार विचार हैं–उन्हें ही अपनायें। ऐसी सभ्यता और संस्कृति को अपने बच्चों में देखना चाहता है मानव। इस का तात्पर्य यह हुआ कि मानव अपने बच्चों को अपने निवास स्थान की भाषा और संस्कृति की शिक्षा देने का प्रयत्न करता है। मातृ भाषा के निर्णय में इस प्रकार हमारे निवास स्थान और देश की भाषा भी आधारभूत बनती हैं। महाराष्ट्र दंपति तेलुगु देश में स्थिर निवास बना लेते हैं तो वे तात्कालिक रूप से महाराष्ट्र ही हैं। उनके पुत्र पौत्र आदि तेलुगु देश में पलकर बडे हुए। जिन्होंने तेलुगु को माँ की भाषा के रूप में सीख लिया, वे तेलुगु वाले ही होंगे या महाराष्ट्र वाले? अगर मातृभाषा के निर्णय में निवसित प्रदेश व्यवस्था का कोई स्थान नहीं है तो सभी संदर्भों में सभी लोगों के विषय में यह बराबर बताया जा सकता है कि वे कई पीढियों से किसी राज्य में स्थिर रूप से रहते हैं। जब मानव के निवास स्थान से संबंधित राज्य या प्रांत का कोई निर्णय नहीं है, तब यह कैसे बताया जा सकता है कि इनके सभी पुरखों की यही मातृभाषा थी, क्यों कि वह अमुक राष्ट्र में रहता है और अमुक राष्ट्र की यही भाषा है। इस प्रकार से मातृभाषा के निर्णय में उनके जनमे हुए और पले हुए प्रदेश का भी कुछ पात्र होता है। इस दृष्टि से एकोजी के पिता निश्चित ही महाराष्ट्र के थे। हम निश्चित रूप से बता देंगे कि एकोजी आंध्र देश में ही पैदा हुए और पले। इसलिये हम उन्हें भी महाराष्ट्री मान सकते हैं। पर एकोजी की संतति को और उनके पुत्र पौत्रों को और उनके वंशजों को महाराष्ट्री बता नहीं सकते।

विजयराघव भूपाल के पश्चात् मदुरै के चोक्कनाथ की आज्ञा के अनुसार, उनकी ही छत्र छाया में उनके भाई अलगिरि के शासन में रहा था तंजाऊर। पर अलगिरि का शासन तीन वर्षों तक भी नहीं चल पाया। ई. स. १६७६ में एकोजी तंजाऊर के राजा बने। साहित्यालोचक और इतिहासकारों ने इस विषय को पहचान तो लिया है, पर उन्होंने साकल्य रूप से यह नहीं पहचाना कि एकोजी के तंजाऊर के शासक बनने के कारण क्या हैं? महाराष्ट्र बताये जानेवाले एकोजी तंजाऊर के राजा कैसे बने?

वह तंजाऊर के इलाके में कैसे आये ? आदि आदि। साहित्यालोचकों ने यह पहचान लिया है कि एकोजी और छत्रपति शिवाजी के पिता शाहजी दक्षिण में जम गये, पर उन्होंने इसका साकल्यमूलक और समन्वयात्मक वर्णन नहीं किया कि नायक राजाओं के अंत होने और महाराष्ट्र शासकों के राज्य के प्रारंभ होने में कौन सी परिस्थितियाँ थीं? इस समन्वय के अभाव में कुछ लोगों ने समझ लिया कि नायक राजाओं के पश्चात् उनके साहित्यक परिपोषण का महाराष्ट्र राजाओं ने, प्रधानतया एकोजी के पुत्र शाहजी प्रभृतिने आगे बढाया है। आंध्र देश में स्थिर निवास बनाने वाले, आंध्र नरेशों के ही समान साहित्य और कला क्रम इतिहास अमूल्य परिपोषण करने वाले कला प्रिय राजा शाहजी का वंशका इस प्रकार है।

बाबाजी और मालोजी का आंध्र देश से कोई संबंध नहीं हैं। छत्रपति शिवाजी के पिता शाहजी पहले पहल कर्णाटक राज्य के नाम से अभिहित दक्षिणांध्र प्रांत में चले आये। बीजापूर के राजा मुहम्मद आदिल ने शाहजी को निजामशाही की कुछ जागीरें दीं। शाहजी को अपना एक दंडनायक बनाया। तत्पश्चात् शाहजीने आदिल की आज्ञा पा कर कर्णाटक पर धावा बोल दिया। तत्परिणामवशात् कोलार, बंगलोर, बाणाकोल, बालापुर, शिरकट आदि आंध्र भाषी प्रांत शाहजी को जागीर के रूप में प्राप्त हुए। अपनी प्रथम पत्नी के प्रथम पुत्र शंभोजी और द्वितीय पत्नी तुक्काबाई को साथ लेकर शाहजी ई. स. १६३६ में कर्णाटक चले गये। उनका विचार था कि अपनी कर्णाटक की जागीरों की देखभाल करते हुए तंजाऊर पर हमला करें। श्री के. वी. लक्ष्मणराव जी का विचार है कि शिवाजी के पिता इसी शाहजी ने विजयराघव को हरा कर तंजाऊर पर कब्जा कर लिया। कुछ इतिहासकारों का मत है कि विजयराघव भूपाल और उनके पुत्र मन्नारदेव मदुरै के प्रभु चोक्कनाथ नर नायक के साथ लडाई करते हुए ई. स. १६७३ में वेंकट कृष्णप्पा नामक दंडनायक के हाथों निहत हुए। अलगिरि के शासनकाल में अपने मंत्री वेंकन्ना के साथ अलगिरि की अनबन हुई। वेंकन्ना ने एक लडके को विजयराघव का बेटा बता कर, उसे तंजाऊर का वारिस बताते हुए अलगिरि के शासन से तंजाऊर को अलग करना चाहा। वेंकन्ना ने इस षडयंत्र में बीजापुर के सुलतान की सहायता माँगी थी। तब शाहजी बीजापुर के जागीरदार ही नहीं थे, बल्कि दंडनायक भी थे। इस संदर्भ में शाहजी एक असाधारण पात्रधारी बने, इसलिये अलगिरि के बाद तंजाऊर को शाहजी अपने लडके एकोजी को दे सके।

हमने मान लिया कि शाहजी अपने बडे लडके संभोजी और दूसरी पत्नी तुक्काबाई के साथ कर्णाटक की अपनी जागीरों की देखभाल करने के लिये आये। यह ई. स. १६३६ के पहले ही घट चुका है। शाहजी की दूसरी शादी सन् १६३० ई. में हुई थी। पर वे सन् १६३५-३६ में ही कोलार आये थे। तब तक तुक्काबाई की कोई संतान नहीं थी।

फिर शाहजी और तुक्काबाई का लडका एकोजी कर्णाटांध्र में ही पैदा हुआ और पला। बिलकुल पहले से ही शाहजी का विचार था कि एकोजी को तंजाऊर का राजा बनायें। इसलिये महाराष्ट्र की अपनी सभी जागीरें छत्रपति शिवाजी (प्रथम पत्नी का पुत्र) के हाथों सौंप दीं। जनता का प्रेम पाने के लिये तेलुगु और संस्कृत के पंडितों का शाहजी ने आदर किया। अमूल्य प्राचीन अभिलेखपत्रों की नकल करवायी। अपने बेटे को मातृभाषा के समान तेलुगु की शिक्षा दिलवाई। फिर भी इस एकोजी को महाराष्ट्री ही माना जा सकता है। लगता है कि शाहजी के वंशजों ने अपनी संतान को अपने पुरखों के नाम ही दे रखे हैं। शादी ब्याह के बाद जब बहू ससुराल पहुँचती है तो कहीं कहीं ससुराल वाले इसे अपनी पसंद का नया नाम देते हैं। लगता है कि इसी रीत के कारण शाहजी ने अपनी वहू एकोजी की पत्नी को दीपांबिका का नाम दे दिया, जो कि उनकी माता के ही नाम (दीपाबाई) से मिलता जुलता था। शाहजी ने अपने लडके एकोजी को अपने मामा वेंकोजी का नाम रखा। इसीलिये एकोजी का दूसरा नाम है वेंकोजी। एकोजी ने अपने बडे लडके को अपने पिता शाहजी का नाम दिया। दूसरे लडके को अपने चाचा शरभोजी का नाम (इसका मूल है शरफजी) दिया। तीसरे लडके को अपनी माँ के नाम से मिलता जुलता नाम दिया। वह है तुक्कोजी।

एकोजी ने सन् १६७६ ई. से लेकर सन् १६८३ ई. तक तंजाऊर पर शासन किया या तो एकोजी के तंदुरुस्ती के बिगडने से या किसी दूसरे कारण से सन् १६८४ ई. में एकोजी का बडा लडका शाहजी तंजाऊर का शासक बना। तब तक शाहजी की उम्र तीस साल की होगी। उसने लगभग आठ साल तक शासन किया। बाद में इस शासन भार को बडे लडके के ऊपर रखा। पर एकोजी की पत्नी महाराष्ट्र की स्त्री जँचती नहीं है। लगता है कि वह तुलु नामक जाति से संबंधित स्त्री है। * एकोजी के पिता प्रथम शाहजी ने सन् १६३६ ई. में कर्णाटांध्र में अपना स्थिर निवास बना लिया। इसके बाद तंजाऊर के पतन तक वह चुप बैठा नहीं रहा। छोटे छोटे प्रदेश और जागीरों पर आक्रमण करते हुए कब्जे में लाता ही रहा। लगता है कि तब शाहजी ने चंद्रगिरि और कल्याणपुरी नदियों के बीच का प्रदेश कब्जे में कर लिया है और एक अत्यंत सुंदर तुलु युवती से प्यार करके विवाह किया है। पर कुछ इतिहासकारों ने यह गलत समझ रखा है कि एकोजी प्रथम के तीन चार पीढियों के पश्चात् उत्पन्न तुलुजराज (प्रताप सिंह का बेटा) से तुलुज वंश का प्रारंभ हुआ है। (कुछ सज्जनों ने यह भी मान लिया कि एकोजी द्वितीय के पुत्र तुक्कोजी का उपनाम तुलज है। यहीं से ये राजा तुलज राजा कहलाये। पर 'तुलुज' शब्द एकोजी के तृतीय पुत्र

* चंद्रगिरि-कल्याण पुरी नदियों के बीच में बोली जाने वाली तुलु भाषा द्राविड भाषाओं में एक हैं। आंध्र भाषा एवं आंध्र जाति की तरह तुलु भाषा और तुलु जाति एक है। ई. स. १९४१ की जनगणना के अनुसार ९,१३८,००० लोग तुलु भाषा बोलते हैं।

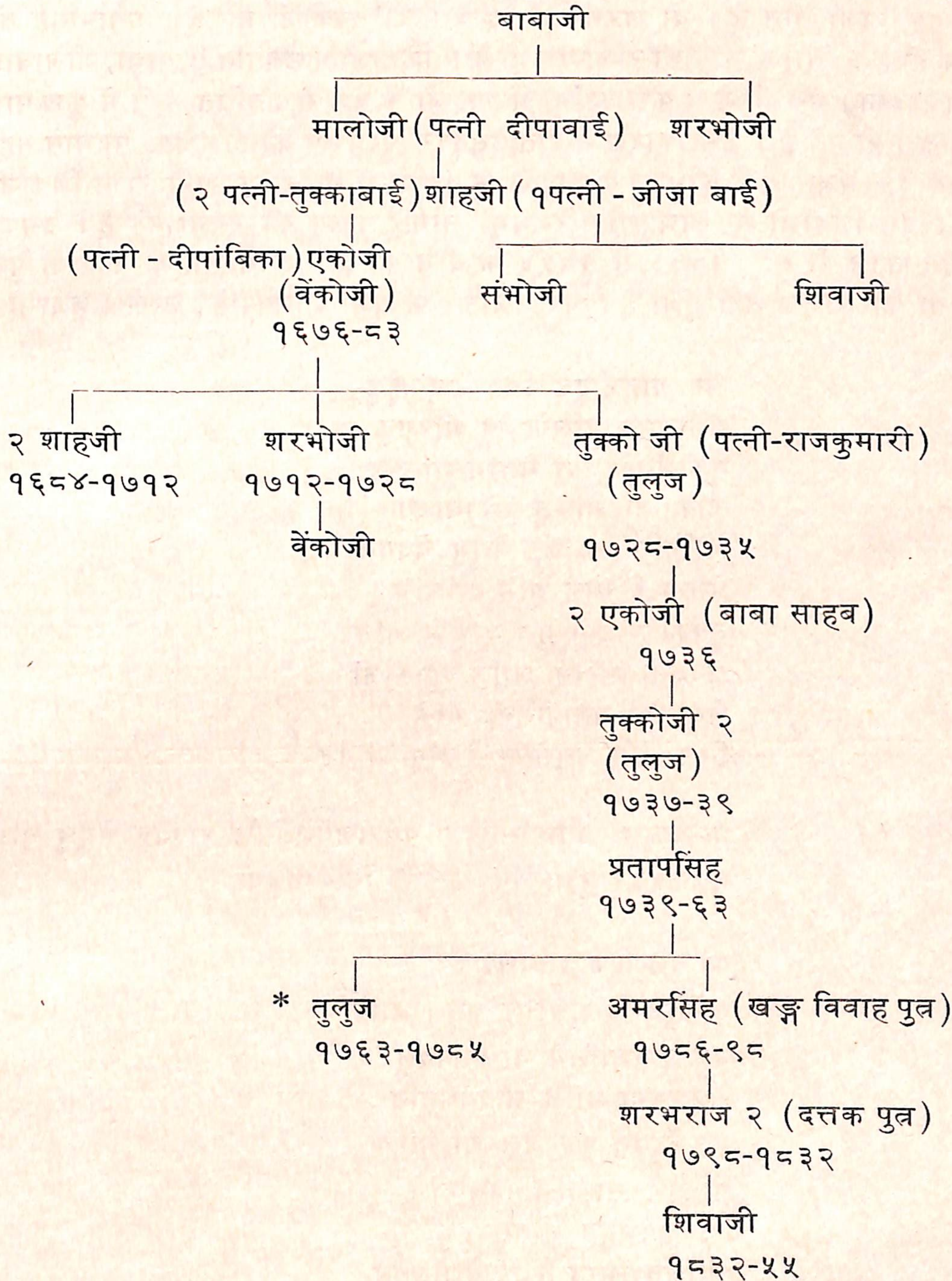
तुक्कोजी का नामांतर था। इतना ही नहीं, एकोजी से लेकर सभी राजाओं के पीछे 'तुलुज राजेंद्र' एवं 'तुलुज भूपाल' आदि शब्द साधारण रूपसे लिखे जाते रहे। 'श्रृंगार पद' नामक पुस्तक में शाहजी, शरभोजी, तुलुज के अलावा एकोजी के नाम के साथ भी 'तुलुज' शब्द का प्रयोग कई प्रसंगों में हुआ है। * हमारे विचार से तुलु प्रांत के आक्रमण के बाद तुलु प्रांत में पैदा होने से तुलुज शब्द एकोजी के साथ प्रयुक्त हुआ है। तुलुज वे हैं, जो तुलु प्रांत पर शासन कर रहे हैं, जो तुलु स्त्री से पैदा हुए हैं, जो तुलु प्रांत में पैदा हुए हैं। हमें यहाँ और एक विषय का ध्यान रखना चाहिये। शाहजी, शरभोजी, तुलुज (तुक्कोजी)–ये तीनों एकोजी के ही पुत्र थे। वे आपस में भाई भाई थे। पर 'दीपांबिकासुत' आदि शब्द शाहजी, तुलुज (तुक्कोजी) राजाओं के लिये ही अनेक प्रसंगों में प्रयुक्त हैं। कहीं भी शरभोजी को 'दीपांबिका सुत' बताया नहीं गया है। इसी कारणवश संदेह होने लगता है कि एकोजी के दो विवाह तो नहीं हुए! कहीं प्रथम पत्नी से दो लडके (शाहजी और तुलुजराजा) और द्वितीय पत्नी से एक लडका (शरभोजी) तो नहीं! तेलुगु के 'श्रृंगार पदालु' नामक पुस्तक के प्रथम पद के "शरभेंद्र तनयुंडैन एकोजी वर विनुत" के द्वारा तुलुज भूपाल का उल्लेख हुआ है, इससे स्पष्ट लगता है कि शरभोजी का एक लडका था एकोजी।

नायक राजाओं के काल में तंजाऊर और मदुरै प्रांत बहुमुखी आंध्र कला माता और सारस्वत ज्योति के केंद्र बने हुए थे। इसीलिये शाहजी प्रथम ने अपने पुत्र पौत्रों को तेलुगु और अन्य भाषाओं की शिक्षा दिलवाई थी। उन्हें कविता, पांडित्य और प्रतिभा से सने हुए बनाना चाहा। इसीलिये एकोजी के पुत्र शाहजी ने अपनी साहित्य सृष्टि और साहित्य पोषण के द्वारा नायक राजाओं को भुला दिया। जिसने जन्मतः तेलुगु सीखी, जो तेलुगु जनता के बीच पला, जिसने तेलुगु की सेवा की, उस शाहजी को और उस वंश के दूसरे लोगों को आंध्र कहते हैं तो उसमें कोई असत्य नहीं है (यह ठीक है कि उनके पुरखे महाराष्ट्री थे।) एकोजी प्रथम से लेकर शिवाजी तक के सभी भोसल वंशजों ने तेलुगु की शिक्षा माता के स्तन्य सेवन के साथ ही पायी थी।

---

* तेलुगु की अनेक कृतियों में अनेक प्रसंगों में तुलुज शब्दका प्रयोग हुआ है। कुछ इतिहासकारों ने इसको 'तुलज' के रूप में प्रयुक्त किया है। यह प्रयोग चर्चा पूर्वक हुआ नहीं है। कुछ लोगों का विचार है कि भोसलवंशी तुल्या भवानी के भक्त थे, इसलिये वे तुलज कहलाये। पर शाहजी के वंशज सभी एकोजी आदि तुल्या भवानी के भक्त दीखते नहीं। कुछ लोग अपर सांबशिव वर्णित हुए हैं। कुछ मन्नारदेव के भक्त भी हैं। इसलिये यह साफ बताया जा सकता है कि निर्विविक्षता के साथ प्रयुक्त तुलुज शब्द तुल्या भवानीपरक नहीं हैं। काव्यों के "लु" कार मध्यमत्व 'ल' कार मध्यमत्व से पूर्णतया भिन्न है। "तुलुज महीनाथ" "तुलुजावनींद्र" जैसे शब्द निस्संदह ही इस अर्थ को व्यक्त करते हैं कि वह तुलुज देशी प्रजा का राजा है।

शाहजी (प्रथम) प्रभृति का भोसल वंश वृक्ष जहाँ तक संप्राप्त है, इस प्रकार है ।



* इस वंश वृक्षों के नामों के नीचे उनका शासनकाल ईस्वी सदी में सूचित किया गया है । लगता है कि ई. स. १७७३-१७७६ के मध्यकाल में तुलुज मुस्लिम शासकों के सामंत थे ।

शाहजी प्रथम और तुक्काबाई के वंश में शाहजी नामक राजा दो हैं। एकोजी नामक राजा तीन हैं। दो शरभोजी हुए हैं। दो तुक्कोजी हुए हैं। प्रतापसिंह तो एक ही है। 'तुलुज' नाम का राजा एक ही है। शिवाजी (छत्रपति शिवाजी, जीजाबाई का लडका) एक ही है। कुछ काव्यों में शाहजी के वंश से संबंधित पद्यों में कुछ पाद विलुप्त हो गये हैं। इसी कारण से इतिहासकार पुरुषक्रम को ठीकठाक पहचान नहीं पाये हैं। तंजाऊर के शासकों में शाहजी के वंशजों में सब से आखिरी राजा शिवाजी हैं। इस शिवाजी ने "अन्नपूर्णा परिणयम्" नामक काव्य की रचना की है। इसका शासनकाल ई. स. १८३३ से १८५५ के बीच का है। इसमें शाहजी के सभी पुत्र पौत्रों का उल्लेख नहीं हुआ है। पर तंजाऊर के सभी शासकों का उल्लेख हुआ है।

श्री शाहजींद्रुडु चिर सद्गुणुंडु-
वासिगानु वेलिंगे वैपु मीरगनु
नेकोजीयनु पुत्रु नेलमि गानपुडु
जोक तो गांचेनु सोंपुमीरगनु
श्रीमिंचि एकोजी चेलुवु चेंदगनु
प्रेमगा ई चोल भूमि पालिंचि
तुक्कोजी अनु पुत्रु दुल्युनि गनिये
चक्कनौ सौंदर्य शालि तुक्कोजी
चेलुवुडैन प्रतापसिंहेंद्रु गाँचे
निल लोन जनुलेल्ल हेच्चुगा बोगडु

इव्विधंबुन प्रतापसिंहेंद्रुडु पूर्वराजर्षुलंबोलि राज्यंबु चेयुचु नुंडि तुलजेंद्रुंडनु कुमारुनिं गांचे * निव्विधंबुगा

आ तुलजेंद्रुडद्भुतगुणुडु
ख्यातुडै विलसिललि घनुल बोषिंचि
बहु योगशालियै भाग्यसंपदलु
सहजमुगा गांचि सौंदर्यघनुनि
शरभेंद्रुडनु पुत्रु जेलुवुगा गांचि
परिपूर्ण साम्राज्यपदमुननुंचे
आ शरभेंद्रुडु नतिसुंदरुंडु
श्रीशिवभक्तुंडु स्थिर यशोधनुडु

---

* प्रतापसिंह का कुमार तुक्कोजी न होकर 'तुलज' ही है।

महदेवु सत्कृपामहिमंबु वलन
वहि मिचिन शिवाजिवर्युनि गांचे

(अन्नपूर्णा परिणयम् M. ६६२.........G. १२२५)

इसमें शाहजी प्रथम, शाहजी के पुत्र एकोजी, एकोजी के तृतीय पुत्र तुक्कोजी का उल्लेख हुआ है। प्रतापसिंह, तुक्कोजी प्रथम का पुत्र नहीं है। तुक्कोजी द्वितीय का पुत्र है। तुक्कोजी प्रथम का पुत्र है एकोजी। एकोजी कवि थे। इस कवि एकोजी के पुत्र तुक्कोजी थे। इस तुक्कोजी का पुत्र है प्रतापसिंह।

"चेलुवुडैन प्रतापसिंहेंद्र गांचे" इस पाद से पहले ही वहाँ पर और दो द्विपदों का होना चाहिये था।

ईडित कविवर्यु नेकोजी गनिये
वाडनि दक्षुंडु वर धीर वरुडु
तुक्कोजि कलिगेनु तुल तूगुनट्लु
नेक्कुडौ विट्ठेल नेसगु तुक्कोजि

करीब करीब ऐसा ही होना चाहिये था। इस बीच में लुप्त वाक्यों का ध्यान न रख कर कुछ सज्जनों ने प्रतापसिंह को शाहजी प्रथम का पडपोता बताया है। पर यह ठीक नहीं है। अनेक ग्रंथों के कवि शाहराज द्वितीय के छोटे भाई तुक्कोजी का पडपोता है प्रतापसिंह। पर कुछ विद्वानों ने गलती से मान लिया कि प्रतापसिंह एकोजी का पुत्र है, जो कि सच नहीं है। हमने पहले लिखा है कि तुक्कोजी प्रथम के पुत्र एकोजी कवि हैं। यह प्रतापसिंह के दादा हैं। इन्होंने रामायण की रचना की है। इस रामायण के M. १६b-२५२५ में लिखा है।

भोसल कलशाब्दि पूर्णचंद्रुडु
भासुर मालोजी पार्थिव सुतुडु
साहसांकुडु नित्यसत्यसंधुंडु
शाह भूपालुंडु चतुर मानसुडु
अतनि तनूजुडेकावनीपालु
डतनि बालकुडु शाहक्षितीपालुं
डतनि सोदरुडु महाकीर्तिशालि
चतुरुडु शरभराजन्य देवेंद्रु
डाराजसोदरुंड तुलविक्रमुडु
धीरुंडु नयशालि दीपांबि सुतुडु
चोल भूपालुंडु सुगुण हारुडु
पालितसुजनुडु परमपावनडु

पनुवडि तुलुज भूपालुडाराज
त............डेकधरणिपालकुडु

यहाँ पर बताया गया है कि शाह महाराज द्वितीय के छोटे भाई तुलुज (तुक्कोजी) भूपाल के कुमार एकोजी हैं। (यही रामायण के कवि हैं) इसलिये हमें मानना ही पडेगा कि अन्नपूर्णा परिणय के द्विपद में एक लोप अवश्य है। रामायणकर्ता श्री एकोजी ने स. १७३७ ई. में एक साल तक ही शासन किया था। इन्होंने द्विपद रामायण-विघ्नेश्वर कल्याण-(नाटक) और कुछ नीति पद्यों की रचना की है। इनका एक नामांतर है बाबा जी।

जो कुछ भी हो, नायक राजाओं के पश्चात् इस देश में महाराष्ट्रियों का साम्राज्य जम गया था। पर शाहजी महाराज द्वितीय के कृपावश तेलुगु संस्कृत आदि भाषाओं की कला सरस्वती ने अपरूप कांति पुंजों को इस देश में फैलाया। विजयराघव के बाद शाहजी प्रथम की सूत्र धारिता में एकोजी राजा बने फिर भी एक दशाब्दी तक (शाहजी द्वितीय के शासनकाल सन् १६८४ तक) आंध्र साहित्य को उचित प्रोत्साहन नहीं मिला। शाहजी द्वितीय ने सब्यसाची की तरह स्वयं कई रचनायें कीं। कई पंडित और कलाकारों का आदर सम्मान किया। शाहजी प्रथम के बाद एकोजी आदि ने तंजाऊर का शासन किया था, पर वे मदुरै के चोक्कनाथ भूपाल के सामंत बने हुए दिखाई देते हैं। "चोक्कनाथपाल" विशेषण जो कि "कुछ तेलुगु श्रृंगार पदों में" प्रयुक्त हुआ है, इसे सिद्ध करता है।

'श्रृंगार पदमुलु' नामक तेलुगु ग्रंथ के १५ वें पृष्ठ के "कोपमु सेयके" नामक पद में तुलजेंद्र सूर्य वंशी बताये गये हैं। इसका तात्पर्य है कि शाहजी का वंश सूर्य वंश है। शाहजी आदि महाराष्ट्र शासक मदन मोहक सौंदर्यवान थे। धीरवीर शूर साहसी थे। पराक्रमी थे। शरणागत के रक्षक थे। संगीत साहित्य कलाओं के महान सेवक थे।

शाहजी द्वितीय सर्वतोमुखी प्रतिभाशाली थे। तेलुगु यक्ष गानों की प्रशस्ति और प्रचार देखकर आपने हिंदी, मराठी और तमिल में यक्षगान नाटकों की रचना की। यह एक विशिष्ट विषय है कि १७ विं सदी में ही आंध्र देश में हिन्दी काव्य नाटकों की रचना हुई। श्री शाहजी से विरचित हिंदी के दो यक्षगान नाटक हैं। (१) विश्वातीत विलास (२) राधा वंशीधर विलास। ये दोनों सरस्वती महल में सुरक्षित हैं। इन यक्षगानों की चार पांडु लिपियाँ प्राप्त हैं। तीन पांडु लिपियाँ तेलुगु में हैं और एक नागरी लिपि में। तेलुगु लिपि में लिखित पांडु लिपियाँ ताल पत्रों पर लिखी हुई हैं। नागरी में लिखित पांडु लिपि

कागज पर है। चारों में अधिक पाठांतर नहीं हैं। तेलुगु पाँडु लिपियों में एक में गीतों के साथ राग, ताल और जतियाँ भी दी गयी हैं। प्रस्तुत रचना राधा वंशीधर विलास में गीतों के ताल और राग निर्देशित हैं।

राधा वंशीधर विलास एक ऐसा यक्षगान नाटक है जिसमें राधा और कृष्ण के श्रृंगार का वर्णन हुआ। नांदी के बाद ऋतु वर्णन होता है। राधा कृष्ण की प्राणप्रिया है। वह प्रणयकोप में आजाती है। रूठकर जमुना के किनारे चली जाती है। एक कुंज में बैठ जाती है। राधा के विरह से संतप्त होकर कृष्ण कन्हैया उद्धव को भेजते हैं कि वह राधा को ढूंढ लायें, पर बेचारे उद्धव ढूंढ नहीं पाते। विफल होकर लौटते हैं। इतने में सिद्धयोगी का आदेश पाते हैं, श्री कृष्ण और अपनी बन्सी में स्वर भर देते हैं। हृदय ग्राही मूर्छनायें देते हैं। राधा के मानस की तंत्रियाँ बज उठती हैं। उसका हृदय कल्लोल कर बैठता है। वहाँ उथल-पुथल मच जाती है। राधा मान त्यागती है। राधा कृष्ण के पास पहुँच जाती है। दोनों एक दूसरे से मिलते हैं। सर्वत्र प्रेम का आनंद फैलता है। इस रचना का प्रारंभ श्रृंगार के विप्रलंभ से है। रचना के अंत तक संभोग श्रृंगार को स्थान मिल जाता है।

इस यक्षगान नाटक की भाषा पुरानी हिन्दी है, जो उस जमाने में बोली जाती थी। यह कौन सी बोली है, जो उस समय प्रचलित थी? यह थी ब्रज की बोली। ब्रज की बोली में खासकर उस कालकी कविता की रचना में व्याकरण के नियमों पर ध्यान नहीं दिया जाता था। यमक, अंत्यानुप्रास के लिये शब्दों को तोडा-मरोडा जाता था। इतना ही नहीं, सुविधा के अनुसार अवधी, भोजपुरी आदि दूसरी बोलियों के शब्दों का भी कविता में प्रयोग होता था। मीरा की पदावली की भाषा-शैली और सूर की भाषा-शैली इन दोनों का कवि पर गहरा प्रभाव है। मालवी और राजस्थानी के प्रयोग बीच बीच में दिखाई देते हैं।

प्रस्तुत रचना राधा वंशीधर विलास की और एक विशेषता संगीत परक है। रचना की भाषा हिन्दी है। पर इस हिन्दी रचना के गीतों को हिन्दुस्तानी संगीत के बदले कर्नाटक संगीत से भर दिया गया है। वैसे यह जानी हुई बात है कि कर्नाटक संगीत से कोई भी हिन्दी रचना समलंकृत नहीं है, सिवाय शाहजी महाराज की रचनाओं के। श्री शाहजी महाराजने ऐसा नया पंथ निकाला है। कर्नाटक राग-रागिनियों से मेल खा कर हिन्दी के गीत नये रूपमें निखर उठे हैं। गीतों का यह संगीत-माधुर्य अनुभव करने वाला ही जानता है। वैसे कहीं कहीं मात्राओं की अधिकता, विकृत शब्दों का बीच बीच में प्रयोग अहिन्दी शब्दों का प्रयोग इस अहिन्दी भाषी कवि की ओर हमारा ध्यान खींचते हैं।

हिन्दी भारती को यह शाहजी महाराज की एक मधुर भेंट है, जो कभी किसीने नहीं पहुँचाई है।

दरु

राधा वंशीधर विलास में एक ऐसे संगीत से संबंधित शब्द का प्रयोग हुआ है जो हिन्दी का नहीं है। वह शब्द है 'दरु'। 'दरु' शब्द तेलुगु भाषा का है। यह एक वाद्य विशेष माना जा रहा है। वीथी नाटक और यक्षगानों में इसका प्रयोग अकसर होता है। दरु का तेलुगु में रूपांतर है 'दरुवु'।* एक ताल, एक वाद्य–एक क्रम में होने वाले वादन को दरु कहते हैं। कथानाटिका–नृत्य नाटिका से संबंधित संगीत रचना का अर्थात् गाने योग्य गीत का नाम भी 'दरु' है। इसीलिये शाहजी महाराजने इस रचना के अनेक गीतों को 'दरु' का नाम दे रखा है।

दरु में पल्लवी, अनुपल्लवी और चरण होते हैं। पर नाटक में जब कहानी फुर्ती से आगे वढ रही हो, तब पल्लवी और अनुपल्लवी के बिना भी 'दरु' केवल चरणों से रचा जाता है।

कुछ दरु ऐसे हैं, जिसमें साहित्य जतियों के साथ है। प्राचीन आचार्यों ने बताया है कि 'दरु' अलग अलग संदर्भों में अलग अलग ढंग से प्रयुक्त होता है। जिनकी संख्या छे है।

(१) पात्र के प्रवेश का दरु (२) स्वागत दरु (३) वर्णन दरु (४) कोलाट दरु (इस खेलमें एक एक आदमी डेढफुट की दो लकडियाँ लेता है। विशेष प्रकार से घूमते हुए आपसमें खेलते हैं। इसे संस्कृत में हल्लीसक कहते हैं। कोलाट आंध्रका एक विशिष्ट प्रकार का खेल है) (५) संवाद दरु (६) उत्तर-प्रत्युत्तर दरु

राधा वंशीधर विलास नामक इस यक्षगान नाटक में कुल ३० दरु हैं।

सूत्रधार

यक्षगान नाटकों में सूत्रधार का प्रधान पात्र है। 'सूत्रधार' शब्द के बारे में कई आलोचकों ने पहले ही चर्चा की है और वे इस निर्णय पर पहुँच गये कि यह "तोलु बोम्मलाट" के कारण उत्पन्न शब्द है।

तोलु बोम्मलाट (चमडे से बने खिलौनों का खेल) इस प्रकार होता है। एक सफेद कपडा परदे के रूप में टँगा दिया जाता है। उस परदे पर विभिन्न वर्णों से चित्रित चमडे के रंग-बिरंगे खिलौने रख दिये जाते हैं। खिलौनों के हाथ पैरों में एक सूत्र बांध

---

* 'दरु' संस्कृत के ध्रुव शब्द से (ध्रुव गीतिका, ध्रुव ताल) उत्पन्न माना जाता है। पर यह ठीक नहीं हैं। स्थलाभाव के कारण यहाँ इसकी विपुल चर्चा नहीं की है।

दिया जाता है। उस सूत्र को हाथों में लेकर खिलाडी खिलौनों से अभिनय कराता है। खिलाडी गीत गाता है। बोलता है। हँसता और रुलाता है।

हमारे आलोचकों का मत है कि खिलाडी इस खेल में अपने हाथ में सूत्र ले लेता है। इसलिये प्रयोक्ता का नाम सूत्रधार पड गया होगा।

नाटकों में सूत्रधार एक ही होता है। वही प्रयोक्ता भी है। वह नटी नटों को अभिनय की शिक्षा देता है। कार्यक्रम को सफल बनाता है। इस सफलता के लिये बहुत कोशिश करता है। आज के फिल्म डैरेक्टर की तरह सूत्रधार का प्रधान भाग है नाटक में। नाटक में कई पात्र होते हैं, पर कई सूत्रधार नहीं होते। 'तोलुबोम्मलाट' में असली सूत्रधार एक ही होता है। जो कि फिल्म डैरेक्टर की तरह प्रधान है। पर हर एक पात्र का एक सूत्रधार या कुल मिलाकर दो या तीन से अधिक ही सूत्रधार होते हैं। क्यों कि बीच बीच में उन्हें हाथ बदलने पडते हैं। कभी कभी एक ही व्यक्ति एक खिलौना छोड देता है और दूसरे खिलौने का सूत्रधार बन जाता है। चाहें प्रधान हो या अप्रधान, खिलौनों के जितने भी खिलाडी होंगे, सभी सूत्रधार हैं। इसलिये यह कहना ठीक नहीं है कि एक ही सूत्रधार से चलने वाले नाटक के सूत्रधार का मूल तोलुबोम्मलाट की सूत्रधारिता है। वरना हमें यह भी निरूपित करना होगा कि नाटकों की तरह तोलुबोम्मलाट भी अति प्राचीन है। हमें यह भी साबित करना होगा कि भरत महर्षि के काल से पहले तोलुबोम्मलाट थी। पर अभी तक किसी विद्वान ने इसे सावित नहीं किया। शायद इसे साबित करना असाध्य ही है। हमारे कहने का तात्पर्य है कि आलोचकों ने सूत्रधार शब्द के स्वरूप और विकास पर व्याख्या करते हुए शायद भूलचूक की होगी।

सूत्र का अर्थ रस्सी ठीक है। 'सूत्रधारी' का अर्थ सूत्र को धारण करने वाला न होकर सूत्र की तरह (सूत्रमिव) धारण करने वाला बताया जाना चाहिये। मोतियों और रत्नों की माला होती है। वे सब अलग अलग हैं। इन सभी को माला बनाने के लिये क्रम से पिरोना पडता है। पिरोने में धागा उपयोगी सिद्ध होता है। धागा माला के अंतर्गत होता है। वह मोतियों को क्रम से बनाये रखता है। वैसे ही नाटक में कई पात्र होते हैं। पात्रों के सक्रम रीतिसे नाटक की शोभा को बढाने में, अंतर्गत रूप से प्रयत्न करने वाले हैं सूत्रधार। (सूत्र मिव धरति–इति सूत्रधारी–सूत्र धारः) इस प्रकार सूत्रधार शब्द प्रचार में आया होगा। माला के अंतर्गत एक ही धागा होता है। नाटक का भी एक ही सूत्रधार होता है। वही उचित भी है। फिर यक्षगान नाटकों में भी एक ही सूत्रधार होता है। वही कथा को आगे बढा ले जाने वाला व्यक्ति है।

सूत्र शब्द आर्षेय है। सभी शास्त्रों में आर्ष विज्ञान मृग्य होता जा रहा है। आर्ष विज्ञान का सांकेतिक शब्द समूह भी अर्थ-ज्ञान से दूर होता जारहा है। आर्ष दृष्टि से

देखने पर पता लगता है कि सूत्र वही है, जिसमें अंतर्गत का विशेषार्थ है, जिसमें परिगर्भित गूढार्थ है। आर्षशास्त्रगत–सूत्र समुच्चय इसी प्रकार का है। पर इससे संबंधित शोधकार्य संबंधित सभी अंश यहाँ स्थल की कमी के कारण प्रगटित किये नहीं जा सकते। यह सब लिखने में हमारा यही उद्देश्य है कि सूत्र शब्द को तोलुबोम्मलाट पर आधारित होकर उत्पन्न शब्द मानना एक साधारण ऊहा मात्र है।

यक्षगान में नाटक अकेले सूत्रधार ही गद्य (वचन) सुनाता है। पद्य पठन वह अकेले ही करता है। कभी कभी ऐसा भी होता है कि सूत्रधार पद्य का एक चरण पढ जाता है। बीच में एक दूसरा दुहरानेवाला आ जाता है। उस चरण का थोडासा भाग या पूरा भाग दुहराता है। सूत्रधार दरु या गीत गाना शुरु कर देता है, बृन्द के सभी लोग दुहरा देते हैं। चरण के अंतिम भाग से दुहराने वाले टेक (पल्लवी) को दुहरा देते हैं। प्रारंभ में सूत्रधार का बृन्द प्रार्थना आदि कार्यक्रम पूरा कर देता है। अंत में सूत्रधार और उसका बृन्द और अन्य पात्रधारी मंगलगीत गाते हैं। वैसे सूत्रधार को, उसके गद्य पद्योंको हटाने पर वाकी भाग एक उत्तम पद्यगेय नाटिका बन जाता है।

अबतक यक्षगान के साहित्येतिहास में कई आलोचकों ने शोध कार्य किया है। पर उन्होंने कई विषय ठीकठाक पहचाने नहीं थे। ऐसे कई विषयों का समन्वय करते हुए कई रहस्यों को मैंने यहाँ पर शोधमूलक सिद्ध किया है। एकवाक्यता के रूप में ला रखा है। इस प्रस्तावना से यक्षगान वाङ्मय का इतिहास एक नयी मोड ले रहा है।

हम चाहते हैं कि शोधज्ञ सत्यान्वेषणपरक मार्गों में खोज करते हुए यक्षगान के ऐतिहासिक अंशों को आगे भी प्रगटित करें।

आंध्र प्रदेश की सरकारने अपने शिक्षा विभाग के राज्य अभिलेख पत्र (State Archives) विभाग से संबद्ध आंध्र प्रदेश गवर्नमेंट ओरियंटल मान्युस्क्रिप्ट्स लाइब्रेरी अंड रिसर्च इन्स्टिट्यूट के द्वारा अप्रकाशित अमूल्य प्राचीन ग्रंथों को, विविध काव्य पुराण शास्त्र ग्रंथों को संशोधित कर विशुद्ध रूप में प्रकाशित करवाने का संकल्प किया है। वैसे आंध्र प्रदेश की सरकार को अपनी जनता से संबंधित आंध्र भाषा के ग्रंथों का प्रकाशन ही करना है। पर आंध्र सरकार ने संपूर्ण भारत वर्ष को एक ही माना है। भारत की समस्त साहित्यक भाषाओं को समादरणीय और प्रोत्साहन के योग्य माना है। इसलिये आंध्र भाषा के साथ साथ अन्य भाषाओं के ग्रंथों का प्रकाशन करने का भी आंध्र सरकार ने संकल्प किया है। भाषा-भाषियों की संख्या की दृष्टि से अत्यधिक लोगों से बोली जाने वाली और राज भाषा के रूप में भारत वर्ष में समुन्नत स्थान प्राप्त करने वाली भाषा हिंदी है। इसी दृष्टि से हिंदी में पहले पहल इस अमूल्य प्राचीन ग्रंथ का प्रकाशन

किया जा रहा है। आंध्र प्रदेश गवर्नमेंट ओरियंटल मान्युस्क्रिप्ट्स लाइब्रेरी अंड रिसर्च इन्स्टिट्यूट की प्रकाशित रचनाओं में यह तृतीय पुष्प है। बाकी दो तेलुगु पुस्तकें हैं।

The Journal of the Tanjore Saraswati Mahal Library में यह राधा वंशीधर विलास नामक यक्षगान नाटक ई. स. १९६१ में प्रकाशित हुआ था। अव इसका पुनः प्रकाशन हो रहा है। इसके संकलनकर्ता श्री मंचाल जगन्नाथरावजी (आकाशवाणी, हैदराबाद) हैं। श्री जगन्नाथरावजी ने इस यक्षगान नाटक के दरुओं के (कर्णाटिक संगीतशास्त्र के अनुसार) रागों का स्वर प्रस्थान किया है। इस यक्षगान नाटक के प्रथम प्रकाशन में संगीत राग प्रस्थान था नहीं। अब इस स्वर प्रस्थान से रचना का महत्व बढ गया है। हम उनके बडे ही आभारी हैं।

हमारे इस अमूल्य प्राचीन साहित्य के प्रकाशन में हमें सदा सर्वदा प्रोत्साहन पहुँचाने वाले और जरूरी सहायता पहुँचाते हुए भारतीय साहित्य को प्रकाश में लाने वाले आंध्र प्रदेश सरकार के मुख्यमंत्री आदरणीय श्री पी. वी. नरसिंहारावजी, आंध्र प्रदेश सरकार की शिक्षा विभाग के सचिव श्री यस. आर. राममूर्तिजी I.A.S., उपसचिव श्री डी. कामय्याजी, सहायक सचिव, श्री ऐ. रघुनाथरावजी के हम वडे ही कृतज्ञ हैं। इन ग्रंथों के प्रकाशन में बडी ही श्रद्धा और आसक्ति से अत्यंत सहायता पहुँचाने वाले आंध्र प्रदेश टेक्स्ट बुक प्रेस के निदेशक श्री यन्. नारायणरावजी और उप निदेशक श्री जी. रामकृष्णारावजी को हम अपने अभिवंदन पहुँचाते हैं।

एवं
वाङ्मय महाध्यक्ष
डाक्टर वड्लमूडि गोपालकृष्णय्या
"कला-प्रपूर्ण"
Joint Director
Andhra Pradesh Government
Oriental Manuscripts Library
and Research Institute
Afzalgunj, Hyderabad.

हैदराबाद
१६-३-१९७२
तेलुगु उगादि

राधा वंशीधर विलास नाटक

[यक्षगान नाटक]


GOVERNMENT OF ANDHRA PRADESH
सत्यमेव जयते

राधा वंशीधर विलास नाटक

कांभोजि राग

श्लो : देवकीगर्भसंभूतम् मुनिचित्ताब्जषट्पदम् ।
राधिका प्राणदयितम् नौमि ब्रह्म सनातनम् ।।

म ग म पा दाप द सं सं नि द दा प द सां सां सं सं नि प द सा ।
दे व की गर्म संभू तम् मुनि चित्ताब्ज षट्पदम् ।

सं रिं गं मं गं रिं सं सं सं रिं नि द द प दा पा-द सं सं नि द प म गा रि सा ।।
रा धि का प्राण दयितम् नौ मि ब्रह्म सनातनम् ।।

[सूत्रधार:-ऐसे इष्ट देवता प्रार्थना कर राधा वंशीधर विलास नाटक सो हम इस रंग-भूमि बीच नृत्य करे चाहे। सो नाटक निर्विघ्न सिद्धि हो बेकूं विघ्नेश्वर स्तुति कीये। अपने भक्त पर दया कर इस रंगभूमि बीच विघ्नेश्वर नृत्य करते आवत है देखो।]

राग—सौराष्ट्र : दरू ताल—एक

गजमुख आवे देखो गज मुख
सब तुम देखो गजमुख आवौ ।।गज।।
अरुण मुख मंडल गंड मद विराजित
खंडेंदु शेखरै सो गौरी सुत ।।गज।।
विघ्न तिमिरहर ज्ञान सूर्य प्रकाश करे
अपने भक्त पर दया कर ।।गज।।
अंग अंग नागभूखन विराजित
भव सागर खेद हरन हार ।।गज।।

द नि सं सं । सां सं नि ।। सं रिं सं रिं सं नि । द द प प ।। द नि सं नि । दापा ।।
गज मुख । आवे ।। दे......खो । गजमुख ।। सब तुम । देखो ।।

प म दप । म ग रि स ।। स रि ग म । दा पा ।। म ग रि रि ।
(सा···।।···।···।।
गजमुख । आवे ।। गजमुख । आवे ।। दे···। खो···।।···।···।।

-ग म प । प म ग रि ।। रि स सा । नि़ द़ द़ नि़ ।। स रि ग म । पा पा ।। म दा द
अरुण । मुखमं ।। डलगं । डमदवि ।। राजित । खंडें ।। दुशेख ।

द प पा ।। ग म प द नि द । पम ग रि ग म ।।
रैं सो ।। गौरी । सुत ।। गजमुख ।।

-मा म । ग रि रि स ।। स सा नि़ । दा द़ द़ ।। स नि़ स रि । सा ।।
विघ्न । तिमिरह ।। रज्ञान । सूर्यप्र ।। काशक । रे ।।

स रि ग म प द । नि द प म म ग ।। म प प म । दा द प ।।
अपने । भ ।। क्त पर द । या कर ।। गजमुख ।।

म ग म प । -म म ग ।। रि सा स । नि़ द़ स नि़ ।। स रि स रि स रि ।
अंग अं । गना ।। गभूख । न विरा ।। जित ।
ग म दा ।। नी सं सं । रिं मं गं रिं ।। सं नि सं नि । द द प प ।।
भवसा ।। गर । खेद ह ।। रन हा । र ।। गजमुख ।।

[सूत्र : ऐसे विघ्नेश्वर आये। राधा वंशीधर विलास नाटक के विघ् सब दूर किये। बहर कथा ऐसी चले। राधा शां सूं प्रणय कलह कर रूठ श्रृंगार वन में आवति है कहकर। वन में गौरी लोग दूर करने को द्वार पालक आवे देखो।]

राग–सुरटि दरू ताल–एक

लटकत आवे द्वारपाल देखो
सिर बांध चीरनि का जामा ।।लट।।
पहर देखो तिलक माथे धर
सब जन दूर करे ।।लट।।
लाठी हाथ धर पटुक बांधकर
विहासत खेलत आवे देखो ।।लट।।

-रि मा प नी । द नि सा ।। नि द प म । ग रि रि रि ।। सा । रि म पा ।
लटकत । आवे ।। द्वारपा । ल दे ।। खो । देखो ।।

रि प मा । नि द पा ।। म ग री । रि रि सा ।। -म ग रि । मा पा ।।
सिर बां । ध ची ।। र निका । जामा ।। पहरा देखो ।।

-नि द नि । सां रीं ।। सं सं प सं । नि द प द प ।। म ग री । सा ।।
तिलक । माथे ।। धर सब । जन दू ।। रकरे ।। लटकत ।।

प नि द प । प प म ।। प नि द नि । सं सं सं ।। नि सं रिं मं । गं रिं सं सं ।।
लाठि हा । थ धर ।। पटुक बां । ध कर ।। विहसत ।। खेलत ।।

नि द नि सं । नि द पा ।।
आ वे । देखो ।। लटकत ।।

[सूत्र : ऐसे द्वारपाल आये श्रृंगार वन संवारे । ऐसे जाय राधा सू कहा सो बात सुन । राधा जू श्रृंगार वन में सखियों से आवति हे देखो ।]

राग–भैरवि **दरू** **ताल–एक**

राधा जू आवति है देखो
सुंदर रूप बन्यो नीको गजगति चली ।। राधा ।।
अधर प्रवाल शोभे पूर्ण चन्द्रमुखि ।। राधा ।।
बेनि त्रिवेणी शोहे कर किसलय सुहावे
चंपक नासिका शोभे सकल श्रृंगार किये ।। राधा ।।

द नि सां । सं नि नि द ।। द प प द म । पा द नि ।। सां...।......।।
राधा जू आ ।। वति है । दे ।। खो । ।।

पा सं नि द । पा प प ।। म ग री । सा ।। रि रि । ग म प प ।।
सुंदर । रूप ब ।। न्योनी । को ।। गज । गति चलि ।। राधा ।।

स स रि रि । रि ग म रि ग स ।। रि ग मा ।......।। पा म नि । द द प ।।
अधर प्र । वाल ।। शोभे । ।। पूर्ण चं । द्र मुखि ।। राधा ।।

रीं गं रिं । सां सं नि ।। नि द द प । पा ।। प म प प । प प - प ।। दा नी सां ।।
बेनि त्रि । वेनी ।। शोहे । ।। कर किसि । लया सु ।। हा । वे ।।]

म । ग म दा ।। नि नि सां । ।।
त । सखिरी ।। सुन ले । ।।

नि सं नि द । द म म म ।। म ग रि । रि सा ।। सा स । मा मा ।।
जमुना । तीर दे ।। ख कै- । से ।। रम्य । सोहे ।।

ग म द द । नि नि द म ।। ग म द नि । सां ।। सं नि सं मं । गं रि सं सं ।।
सारस । कैसे ।। किलका । रे ।। हंस दे । ख सखि ।।

नि सं नि द । नी सां ।। नि सं नि द । द म म म ।। ग म ग रि ।
बिसरुह । चाखे ।। चकयी । दोंवुमिल ।। किलका ।

गमद नि सं नि द म ।। ग म द नि सां । द नि सां ।।
रे ।। सुन ले ।।

नि सं नि द । द म म म ।। ग म ग रि । स स स स ।। नि़ सा । मा म ग ।।
देख स । खी बिस ।। रुह सब । प्रघलित ।। भये । बेल दु ।।

म द द म । दा नि ।। सं नि सं रि । सां ।। सं नि सां । मं गं रि सं ।।
मन सौं । देख ।। लपटां । ये ।। मदम । त्त पिक ।।

नि सं नि द । नी सां ।। नि सं नि द । द म मा । ग म ग ग । रि रि सा ।।
बहुत ड़ । रावे ।। मधुकर । झंका ।। र करते । फिर ।।

ग म द नि सां । द नि सां ।।
.........। सुन ले ।।

नि सं नि द द म म म । ग म ग रि सा स ।। स मा ग म म ग म ।
फलित भये सखि । तरु सब देखा ।। वसंत रुतु कै ।

दा म म द नि सं ।। सं मं गं मं गं रिं सं सं । नि सं नि द नी सां ।।
से सुहावे ।। सुन ले विरहन वनि तन । मदन डरावे ।।

ग म ग रि सा ।। द नि सां । ।। द नि सां । ।। । द नि सां
चलि आवे।। सुन ले ।...।। सुन ले ।...।। । सुन ले ।।

[सूत्र : ऐसे राधा जू श्रृंगार वन वर्णन करते समय सायंकाल भयो सो देख राधा जू वर्णन करे देखो ।]

राग–अठाणा　　　　दरू　　　　ताल–तिश्र लघुवु [दाद्रा]

राधा :– सखि सांध्य राग अरुन सुहावे ।।सखि।।
माणिक्य जैसो वारुणी अबला मानो
गिरि पर नाथ ढूंढती कर लिये
दीपश्रेणि जो ऐसे सुहावती सांध्य राग अरुण सुहावे ।।सखि।।
कमलिनीनाथ रूठ गये कहकर मुख म्लान होती [कहरवा]
कुमुदिनीनाथ आगमन सुन मुखस्मित पूर्ण होती ।।सखि।।
खग देखो सब श्रेणि बांध के अपने घर चले है [कहरवा]
चकयी मित्र वियोग से कामिनी तज फिरे ।।सखि।।

रिं सां । नि सं नि ।। दा द । प म प ।। प प म ग म । पा द द । नि पा ।।
सखी । सांध्य ।। राग । अरुन ।। सुहा । वे । ।।

नि सं रीं मं ।। रिं सं नि प प । द नि प ।। नि सं नि ।। दा प । प म प ।।
प प म ग म । पा ।।

मा ।। णिक्य । जैसो ।। । सांध्य ।। राग । अरुण ।। सुहा । वे ।।
म रि म रि म । पा ।। प प द द । नि पा ।। म प सं । ।। सं सं सं । सं नि सं ।।

वारु । नी ।। अबला । ।। मानो । ।। गिरि प । र ना ।।
रिं सां सं । नि द ।। सं नि सं । सं मं गं मं ।। रीं सं । सं नि सं ।। नि द द ।
प प द द नि ।।

थ ढूं । ढ़ती ।। कर लि । ये ।। दीप । श्रेणि ।। जो ऐ । से ।।

नि सं सं रीं सं । नि पा ।। द नि प । नि सं नि ।। दा द । प म प ।। प प म ग म ।
पा ।।

.........। सुहा ।। वती । सांध्य ।। राग । अरुण ।। सुहा । वे ।।

म रि म प । पा प ।। प म प द । द नि पा ।। प म प सं । सं सं सां ।।
कमलिनी । नाथ ।। रूठ ग । यो ।। कहकर । मुखम्ला ।।

स नि सं । नि द दा ।। सं नि सं मं । गं मं रिं सं ।। नि सां रिं । सं निं द ।।
न हो । ती ।। कुमुदिनी । ना ।। थ आ । गमन ।।

प प द द । द नि सं नि ।। रिं सं नि प । द नि पा ।।
सुन मुख । स्मितपू ।। र्ण हो । ती ।।

म म प सं । सां सं सं ।। प सं सं सं । सं नि द ।। द द नि सं । नि द द द ।।
खग दे । खो सब ।। श्रेणि बां । ध के ।। अपने । घर ।।

द नि सं नि । द दा ।। नि सं गं मं । रीं सं नि ।। सं नि रिं सं । निपा ।।
चले । है ।। चकयी । मित्र वि ।। योग । से ।।

प सं नि द । प म ।। प म रि म । पा ।।
कामिनी । तज ।। फिरे । ।।

[सूत्र : ऐसे राधा जू संध्या राग वर्णन करे इतने में सूरज अस्तादि्र पुरे गये तब तिमिर देख राधा जू बात करी देखो ।]

राग–शहान दरू ताल–तिश्र लघुवु–दाद्रा ।

राधा :–देख माथि तिमिर श्याम घनेरा । तिमिर श्याम घनेरा ।।देख।।
अपनो मानिक कहा गया सु ढूंढन दशे दिशे
व्यापक रवि चले आवे मानो तिमिर नहीं अंबर घना ।।तिमिर श्याम ।।
निशिकान्त कामिनी सांयीं आगमन सुन मृगमद पंक
मानो चिरकाये सब ठौर ऐसे मेरा मन भावे ।। तिमिर ।।

री ग । म प द प ।। म ग म । ग रि स ।। स स नि़ स नि़ । सा ।। द़ द़ द़ ।
नि़ स रि म द़ ।।
देख । माथि ।। तिमिर । श्याम ।। घने । रा ।। तिमिर । श्या म ।।

द़ स नि़ रि । सा ।।
घने । रा ।।

रि रि ग । म पा ।। म ग म । रि रि रि । स स स नि़ । नि़ स स ।। दा नि़ ।
रि सा ।। नि द प म म ।
अपनो । ।। मा । निक क ।। हा ग । या सु ।। ढूं । ढ़न ।। द शे ।
द दा ।। द प द नि सं । नि द प प ।। द नि स रि म । द सं नि सं नि ।
स द द रि सं । सं सं सं द ।।

दिशे ।। व्याप । करवि ।। चले । आवे ।। मानो । तिमिर ।।
दपदा । निसनिदप ।। मगम । रिसा ।। द़द़द़ । निसरिमद ।।
दसऩिनिंरिं । सा़ ।।

नहीं । ये ।। अंबर । घना ।। तिमिर । श्याम ।। घने । रा ।।
[कहरवा] पमदा । ददपद ।। दनिदसंनिद । पापा ।। पमपदपम
गमरिरि ।।

निशिकां । त कामि ।। नी । सायी ।। आग । मन सुन ।।
मदनिरिं । संनिसंद ।। पदनिदपा । मगगम ।। रि गमप
मगमरिस ।। दरिंसंनि ।

मृग मद । पंक ।। मानो । चिरका ।। ये सब । ठौर ।। ऐसे ।
निदपा ।। मगगम । रिरिसा ।।
मेरा ।। मन भा । वे ।। तिमिर श्याम घनेरा ।।

[सूत्र : ऐसे में मेघ छाये आये सो देख राधा जू सखी से बात करे देखो ।]

राग–अमृत वर्षिणि दरू ताल–कहर्वा–एक ।

राधा :– उमड़ो घुमड़ो आये चहुं ओर सखि
मेघन की माला ।।उमड़ो।।
जोरों गरजत घन मानो मद्दल बाजे मानो
दामिनि अबला नृत्य देखो सखि ।।उमड़ो।।
गगन मनो सखि मदकरि सोहे ये बूंदवा की भतवारी मानो ।।उमड़ो।।
नील मेघ बीच चपला चमक देखौ श्याम पीतांबरधारी ।।उमड़ो।।

पसंसंनि । निपपम ।। मगमग ।। गससनि़ ।। सासस । मगमप ।।
निपनी ।।
उमड़ो । घुमड़ो । आये ।। आये । चहुं ओर ।। सखि । मेघन ।। की मा
सां ।।
ला ।।
गमपम । मगगस ।। सनि़नि़ । सा ।। मगगस । गमपा ।। गमपा ।
जोरो । गरजत । धन मा । नो ।। मद्दल । बाजे ।। मानो ।

प नि ।। नि प नि नि । सां ।। सं नि सं गं । गं सं सां ।। नि नि प प । म म ग म।
दा ।। मिनि ।। अब । ला ।। नृत्य क । रे ।। देखो । सखि ।।

ग ग प म । म ग ग स ।। नि़ स नि़ प । नीं सा़ ।। स नि़ स ग ।
गगन म । नो सखि ।। मदकरि । सोहे ।। ये बूं ।

ग ग स स ।। स नि़ स ग । म पा म ।।
द वाकि ।। मतवा । रि मानो ।।

प ग म प । सं नि सां ।। संनि नि सं । गं गं सं सं ।। सं गं गं सं । सं नि नि प ।।
नील मे । घ बी ।। च चपला । चमक ।। दखौ । श्यामपि ।।

प म म ग । मा पा ।।
तांबर । धारी ।।

[सूत्र : ऐसे राधा जू मेघ वर्णन करते हो ऐसे में चंद्रोदय समय भय सो देख राधा जू चंद्रोदय वर्णन करे देखो ।]

राग–बेहाग दरू ताल–एक

राधा :– प्राची दिक बाला के मा थे चंदन तिलक ऐसे विराजित
निशापति बिंब देखा ।।प्रा।।
तिमिर वारण संग मानो याको हराने
कुपित केसरी अयिसे चंद्रा प्राची सुहावे ।।प्रा।।
उदयाचल सोहे केतकी वृक्ष मानो
वापर निपजे सुम सो चंद विराजित ।।प्रा।।
गगन दिशे सर तारा कुमुद मानो वामे
क्रीड करे हंस सा देख चंदा आवे ।।प्रा।।

ग म प सं । नि द प म ।। ग म गा रि । स नि़ सा ।। पा म । ग म ग रि ।।
प्राची । दिक बा ।। ला के । माथे ।। चंद । न तिलक ।।

ग म प नि । द नी सं ।। सं सं नि सं रिं गं । मं गं रिं सं निं सं ।। नी द प प द।।
अयिसे । विराजि ।। तनिशा । प ति ।। बिंब ।

मा गा ।।
देखा ।।

नि सं नि । पा प मा ।। गम प द नि द प । मा गा ।। नि़ स । गा म पा ।।
तिमिर । वारण ।। संग । मानो ।। या । को ।।

म ग म प । गा ।। ग म प । प नि द नि सं ।। सां नि सं रिं गं । मं गं रिं सं सं नि।
हरा । ने ।। कुपित । केसरि ।। ऐसे । चं ।।

सां । सं नि रिं सं नी द ।। पद प मा । गा ।।
दा । प्राची ।। सुहा । वे ।।

ग म प द नि द । प प द प म म ।। गा ग रि । म ग रि स स स ।। प मा । गा ।।
उदया । चल सो ।। हे के । तकी वृ ।। क्ष मा । नो ।।

ग म प नि । सं नि सां ।। सं सं निसं रिं गं । मं गं रिं सं निं ।। रिं सं नी द ।
पा द म म ।।
वापर । निपजे ।। सुम सो । चं ।। द विरा । जित ।।

ग म प प । प द नि द प प द ।। मा गा । रि म ग ।। स नि़ सा । ग म प नि द ।।
गगन दि । शे सर ।। तारा । कुमुद ।। मानो । वा मे ।।

द नि सं नि । सां सं ।। सं निं सं रि गं ।। मं गं रिं सं नि सं ।। रिं सं नीद ।
प प द मा ।।
क्रीड़ क । रे हं ।। स सा । देख ।। चंदा । आवे ।।

[सूत्र : ऐसे मो, राधा जो रुठाय । उनके मन मनावने श्याम आवत हे देखो ऐसे राधा जू सखी सुबात करते हैं ।]

राग–मोहन **दरू** **ताल–रूपकम्**

बांसुरी बजावत आवे कान्ह
देखे सो नैन सफल जाने ।।बांसु।।
कटि बांधे पीतांबर नीको मृगमद तिलक सुहावे फाल ।।बांसु।।
मोर मुकुट सिर सोहे देखो श्याम सुंदर सो जाने
जग जग धैय्या धा धा धैय्या ओ दाना ता ।।बांसु।।
नवरत्न भूखन पहिरे अंग अंग मकर कुंडल सुहावे कान ।।बांसु।।
धिरुगुडु धित्तलांगु धिमिकिट किट तक धिन्नाना
धित्ताना धिरुगुडु तकधिमिकिट तक धलांगु धक धलांगु
तकधित्ता

दाना धिमिकिट किट तक धिमिकिट तक धलांगु
धक धलांगु धक धित्ता।
तक तक धिमिकिट धा धा धिरुगुडु तझंतु
तझंतु तक धिमिकिट तक तक तक धा धा
तक धलांगु तक धलांगु तक धित्ता।

सं रिं। ग रिं सं सं सं।। द प। प ग द प।। ग रि। सा स।। प ग। पा दा।।
बां। सुरी ब।। जा। वत आ।। वे। कान्ह।। दे। खे सो।।

द सं। सं द द प।। दा। सां।।
नै। न सफल।। जा। ने।।

द सं। दा पा।। प द रिं सं। द प द प ग रि स रि।। गस। री।। प ग।
कटि। बांधे।। पी। तांबर।। नी। को।। मृग।

प द द द।। गं रिं। सं द द प।। प ग प द। सां सं।।
मद तिल।। क सु। हावे।। फा। ल।। धिरुगुडुधि

प ग। प दा सं सं।। रिं गं। सां सं द।। रिं सं। द प दा।। दगं। रीं सं सं।।
मो। र मुकुट।। सिर। सोहे।। दें। खो श्या।। म सुं। दर।।

ग प द सं। रिं गं रिं सं द प।।
सो। जाने।। जग जग धेय्यधाधा।।

ग प। ग रीं स स।। स़ द। स रि ग स।। री। रि रि रि रि।। गप।
द सा सं स।।
नव। रत्न।। भू। खन पहि।। रे। अंग अंग।। मक। र कुंडल।।

स। सं दं रिं सं।। द प। ग रि स रि।।
सु। हा।। वे। कान।। तक तक धिमिकिट धा धा।।

[सूत्र : ऐसे नंदनंदन आये। कदंब वन बीच बैठ गोपाल सू बात करे देखो।]

राग–खमाच **दरू** **चतुरश्र–एक ताल**

कृष्ण :– ऊधो तुम जायि देख आओ
राधा जू वन में कहां ऊधो तुम ।।ऊधो।।

तुम मना लाओ वोहि जायि देख आवो ।।ऊधो।।
उन बिन मोहे कल न परत है बिन देखे रहा न जाये ।।ऊधो।।
विरहा मौत सहा न जाये बेगहि तुम मिलावो ।।ऊधो।।

राग– खमाच **दरू** **चतुर–एक ताल**

सं नि द नि सां । सं नि द पा ।। द प म ग म । पा म पा ।।
ऊधो । तुम जा ।। यि देखि । आओ ।।

नि दा नि सां । सं नि द सं नि सं नि ।। सां नि द । पा नि द प ।।
राध । जू वन ।। में क । हां ।।

सं नि द नि सा । सं नि द पा ।। द प म ग म । पा द नि ।।
ऊधो । तुम जा ।। यि देखि । आओ ।।

सं मं गं मं । मं गं मं रिं रिं मं गं रिं ।। सां । ग म प द नि द प ।।
तुम म । ना ला । ओ । वोहि ।।

प म ग ग म प । पा द प म ।। द प द द नि सं । सं नि द पा ।।
उन बिना । मोहे । कल न प । र त है ।।

सं नि द द सं नि । सां सं सं ।। सं नि द द नि प । प नि द म पा ।।
बिन दे । खे र ।। हा न । जाये ।।

सं सं मं गां मं । गं रिं गं सं सं ।। सं नि द द नि सं । रिं गं रिं सां ।।
बिरहा । मौत स ।। हा न । जा ये ।।

द पा द द नि सं । सं नि सां सं प ।। प द नि सं रिं सं निं दं । प नि द पमगमप।।
बेगहि । तुम मि ।। ला । ओ ।। ऊधो ।।

[सूत्र : तब उद्धव कहता है :]

उद्धव :– बहुत भला स्वामी ! अभी जाकर मैं जमुना जी के तीर सब वन ढूंढ देखता हूँ। राधा जू को बुला लाता हूँ ।।

[सूत्र : इस प्रकार श्याम का वचन सुन उद्धव राधा जू को ढूंढने चल पड़ते हैं ।]

राग–केदार दरू ताल–चतुरश्र एक

उद्ध :– राधा जू को ढूंढू मायि कहां ?
श्याम पर रूठ गयी कितहीं ।। राधा जू ।।
मधुवन देखा कदंब वन देखा, देखा चंपक वन बाहि ।।राधाजू।।
गुंजित मधुकर पुंज लता गृह, कंजसर देखा ताहि ।।राधाजू ।।
कहो शुक सारिक तुम कहूँ देखी, मृग नयिनी बन माही ।।राधाजू।।
अनूप रूप हरि मध्या को देखा ? हंसतो सी चाल चली यहाँ।।राधाजू।।

प ।। नि पा नि सां नि । पा म म गा रि ।। गस सा । प म ग रि ग रि स नि ।।
राधा । जू को । ढूंढू । ।।

स नि प नि नि । सा ग रि ग । ग स सा । सा स प ।।
मयि क । हां । । श्याम ।।

प म म गा रि । रि स सा । स म ग म प । सं नि प म ग रि स ।।
पर रू । ठ गये । कि तही । ।। राधा ।।

अ ।। स स म ग ग म । पा पा । प पा म प । प प नि सां नि ।।
मधुवन । देखा । कदंब । वन दे ।।

सां सां म । गां मं गं रिं गं । गं सं सं नि । नि प पा ।।
खा दे । खा चं । पक वन । बाहि ।।

म ग म प प । प सं नि सं सं । सां मं गं गं रिं । सां नि सं सं ।।
गुंजित । मधुकर । पुंजल । ता गृह ।।

पा नि सां सं नि । प प म गा रि । सा स म ग म । प म ग म पा ।।
कंजि । सर दे । खा । ताहि ।। राधा ।।

च ।। नि सां नि । प प म म गा रि । रि स स स । स स नि॒ नि॒ प॒ नि ।।
कहो । शुक सा । रिक तुम । कहूं दे ।।
सा स म । ग म पा म । म ग म पा नि । सा सं ।।
खी मृग । नयनी । वन मा । ही अ ।।

स मं ग गं रिं । गं सं सं नि । नि प प सं नि । सां रीं ।।
नू परू । प हरि । मध्या । को दे ।।

गं सं सां संनी पा । पा म ग ग रि । सा स म ग म ।।
खा हं । स तो सी । चाल चले यहां राधा ।।

[सूत्र : इस प्रकार उद्धव ने सब वन ढूंढ लिये। किन्तु कहीं राधा जी को नहीं पाकर थक गया। जमुना तीर पर जाते समय एक शीतल निकुंज भवन में बैठकर सखी के साथ बातें करने वाली राधा जी को देखा। और तुरन्त उनके पास जाकर उद्धव कहने लगा—]

राग—बिलहरि **दरू** **ताल—चतुरश्र एक**

उद्ध :— काहे मायी तुम अकेली, काहे को आयी हो यहां ?
बिन देखे तुम्हारे श्याम तपता है
निशि दिन तुम बिन कल नाही परे उनको ।
तुम कोप कर यहां आयी हो मायी ।। काहे ।।
पल छन तुम्हारे ध्यान, जित जित तुमको चितवत है ।
उन सो ऐसे कलह कर इंदुमुखी तुम जायी हो ।।काहे।।
उनने पढ़ायो अब मोहि तुमको मनवाने
उठो चली आ बात मान मानिनि श्याम पास ।।काहे।।

प: पा द सां । सां नि दा । प प द द । पा म ग ।।
काहे । मायी । तुम अक । ली ।।

ग रि ग पा । प म ग ग रि ग रि । सा स नि़ द । द द सा ।।
काहे । को आ । यी हो । यहां ।।

द द दा । द प म ग रि ग । पा प सं द । सां सं ।।
बिन दे । खे । तु । म्हारे । श्याम ।।

सं रिं गं मं गं रिं । सां नि दा । द प म ग रि ग प द । सां नि द प ।।
तपता । है । मा । यी ।। काहे ।।

अ: प प प प । द प म ग ग म रि । प ग प सं द रिं । सं सं नि द प ।।
निशि दिन । तुम बिन । कल ना । हि परे ।।

सं द द रि सां नि । द प म ग रि ग प द । सं रिं गं मं गं रिं । सं सं नि द प ।।
उनको ।.........। तुम को। प कर ।।

संदसां। रिगपदसांनि। दपमगरिगारि। पगपपद।।
यहां। आ यी। हो। मा यी।।

दसांनिदपा। पमगगरिगरि। सासनि़द़। द़द़सा।
काहे। को आ। यी हो। यहां।। काहे।।

च।। पपदसंसंनि। दनिदनिपा। दनिदपमग। पदपमग।।
पल छन। तुम्हरो। ध्यान। जित तित।।

गरिगरिसा। सगरिगरिग। पा। दनिपपा।।
तुमको। चितवत। है उन सों।।

दपदसंरिंगंमं। गंगंरिंगंमंगंरिं। संसंनिदप। संसंददरिंसं।।
ऐसे। कलह। कर कर। इंदु मु।।

संनिददप।पदरिंसंनिदपद। निपदप मगगरि। सनि़द़सरिगप।।
खी तुम। आ। यी। हो।। काहे।।

२. पपपा। पदनिदप। मगगरिसस। सरिगगरिग।।
उनने। पढ़ा। यो अब। मोहि।।

पपपा। पसंददसांनि। दपपा। दपमगरिगपद।।
तुमको। मन वा। ने।

संनिददप। पपसंदसं। संरिंगंमंगंरिंसं। सांनिदप।।
..................। उठो च। ली आ। बात।।

पसंदसंदसंद। पाप। पदसंनिदपमग। गरिसरिगप।।
मान। मानि। नी श्या। म पास।। काहे।।

[सूत्र: उद्धव की इस प्रकार की बातें सुनकर राधा जी प्रत्युत्तर देती है।]

राग–काफी **दरू** **ताल–मिश्र चापु**

राधा :– मोरी सारी बात सुन लो, निपट कपटी श्याम है समझो
उनको अब मैं कैसे पत्यावू है उद्धो ।।मेरी।।
उनके गुन निसि दिन समझी हूँ मैं नीको
काहे को तुम मोको सिखवाते हो उद्धो ।।मेरी।।

मैं तो कलपति पल छन उन सों ऊधो
वेकारे यासों रूठी मैं आयी हूँ ।।मेरी।।

सा । री ।। ग रि प म । म ग री ।। रि ग स रि म । म म पा ।।
मो । री ।। सा । री ।। बात । सुन लो ।।

म ग रि म प नि । सं रिं गं रिं पं मं गं रिं ।। सं नि सं रिं । गं रिं सां ।।
......|....................।। निपट । कपटी ।।

सं नि द नि । नि प द द म प ।। सां । ।। सं नि सं नि गं । रीं सां ।।
श्याम । है सम ।। झो । ।। उन । को ।।

सं सं नि द । नी पा ।। प म पा । सां नि प ।। म ग गा । री ।।
अब । मैं ।। कै । से पत्या ।। वू ।।

स रि म प द नि । द प म ग रि स ।।
है । ऊ द्धो ।। मोरी ।।

अ ।। प प नि प । मा ।। ग री । स रि म म ।। प प नि । दा नी ।। द प द ।
उन... । के ।। गुन । निशि दिन ।। सम । झी हूँ ।। मैं ।

द म पा । प म पा । प सं नि सां ।। रिं रिं गं । रिं सं रीं ।। नि सं रिं पं ।
नीको । का । हे को ।। तुम । मो को ।। सिखा ।

रिं गं रिं मं गं रिं ।। सां सं नि । सां ।। प म पा । सां ।। नि पा । म ग ग री ।।
वा ।। ते । हो ।। ऊ । धो ।। सुना । लो ।।

रि स रि म । म म पा ।। प द नि सं रिं गं । रिं सं नि द प म ग रि ।।
बात ।। सुन लो ।। । ।। मोरी ।।

[सूत्रः राधा जी के यह वचन सुनकर उद्धव प्रत्युत्तर देता है ।]

राग–कल्याणि **दरू** **ताल–चतुरश्र एक**

उद्धव :– मत बोल ऐसी बात, वनमाली सो
वोही देव, वोही धन, वोही नाथ मायी ।।मत।।

वोही तन, वोही धन, वोही जीव तुम्हारो
कोप तज हित चित कर देखो मायी ।। मत ।।
निशि दिन तुम बिन ढूंढत फिर बन बन
बिन देखे तिन राधा ऐसे बोलो मत मायी
तुमरो कहावे माने, उन कह्यो तुम माने
ऐसी प्रीत में तुम काहे को रूठ आयी ।। मत ।।

प ।। संसंनिदपप । पपमगरि । रिगगा । गरिगगद ।।
मत बो । ल ऐ । सी बा । त वन ।।
पमगगरिगरि । सा ।। स नि़सरिस । सगरिरिरि ।।
माली । सो ।। वो ही । देव ।।
गरिगम । पाप । पमपदप । पसंदसंदसंद ।।
वोही । धना । वो ही । नाथ ।।
सांनिदपाम । गरिगरिसा । सानिसरिग । मपदनि
संरिगंरिं ।। है । मायी । मा । यी ।। मत बोल ।।

अ ।। पपपपम । गगगरि । गरिगरिसनि़द़ । नि़सरिस ।।
वोहि तन । वोहि मन । वोहि जी । व तुम्हा ।।

सरिगरिगरिपमगमपा । पमगगमप । पददप ।
रो । मायी । कोप । तज हित ।।

पसंदसंदनि । संरिंरिसं । संगंरिंगंरिंगंरिं । संनिदपमपदनि ।।
चित । कर दे । खो । मायी ।।

च ।। गगगरि । पगगदपपम । गरिरिस । ससगरिगरि ।।
निशि दिन । तुम बिन । ढूंढत । फिरे ।।

गरिगरिसस । पगमपा । पमगमप । पदनिसां ।।
बन बन । बिन दे । खे तिन राधा ।।

सांसंनिद । गंरिंसंनि । दपपमग । मपदनिसरिगरि ।।
ऐ । से बो । लो मत । मायी ।। मत बोल ।।

सं नि स सं नि द । नि द नि द पा । प ग म पा ।। प प म प नि द ।।
तुमरो क । हावो । माने । उन कह्यो ।।

निद नि द़ नि नि प । प द नि सां । सं नि द गं रिं । सां नि द प ।।
तुम । माने । ऐसी । प्रीत में ।।

प प म प ग म । प नि द पा प म । ग रि सा । नि स रि ग म प द नि ।।
तुम का । हे को रू । ठ आयी । मायी ।। मत बोल ।।

[सूत्र : उद्धौ के ये वचन सुन राधा जी प्रत्युत्तर देती है ।]

राग–शंकराभरणम् **दरू** **ताल–मिश्र चापु**

राधा :– मत कहो ऊधो तुम प्रीति कहां सों आयी
कलह हंसों करे, प्रीति और सों करे वाकीये रीति सारी ।।मत।।
एकन सों हित चित्त एकन सों मीठी बात, ऐसे कपटी मुरारी ।।मत।।
एकन आवन कही, एकन सों प्रीति बढ़ाये निपट कपटी श्याम ।।मत।।

प ।। प म गग म । पा प द नि ।। सां । सं सं सां ।। सं सं नि । द प पा म ।।
मत क । हो ऊ ।। धो । तुम प्री ।। ति क । हां सों ।।

ग म प म ग । म रि रि ग ।।
आ । यी ।। मत कहो ।।

अ ।। प म ग म । प प पा ।। द द प । द प म ग म प द नि ।। प सं सं नि ।
द प प म ।।
कलह । हम सों ।। करे । ....प्रीत । और ।।

म ग म । ग रि गा ।। प म ग । ग रि ग रि सा स नि़ ।। सं नि द नि प ।
प द नि सां ।।
सों क । रे ।। वा । कीये ।। रीति । सा री ।।

सं नि गं रिं सं नि । द प पा ।। म द प म ग रि । सा रि ग म ।।
मत क । हो ।। मत क । हो ।। म त कहो ।।

च ।। पा सं नि । दप पा म ।। प द प । पा म ग म ।। प म गा म । म द प पाम ।।
ए । कन सों ।। हित । चित्त ।। ए । कन सों ।।

ग ग म रि । सा स ।। स म ग म । पा प प ।। प द नि सं । सं गं रिं सां ।।
मीठी । बात ।। ऐ । से कप ।। टी मु । रारी ।।

सं नि गं रिं सं नि । द प पा ।। म द प म ग रि । सा रि ग म ।।
मत क । हो ।। मत क । हो ।। मत कहो ।।

म ग म । प प पा ।। प सं सं नि । द प पा ।। प सं सं नि । सां सं रिं गं ।
मं गं गं रिं ।।

ए । कन आ ।। वन क । हे ।। एक । सों प्री ।। त ब ।

सां नि सं द नि । पं गं रिं । सं सं नि सं द नि ।। सां । रिं गं मं गं गं रिं सं नि ।।
ढ़ाये ।। निपट । कपटी ।। श्या ।.........।।

सं नि गं रिं सं नि । द प पा ।। म द प म ग रि । सा रि ग म ।।
मत क । हो ।। मत क । हो......।। मत कहो ।।

[सूत्र : यह कह कर राधा जी उद्धव से कुछ और कहती है ।]

राधा : उद्धौ, उनका कपट मैं जान गयी, अब मैं वहां नहीं आऊंगी । तुम जाकर यह बात श्याम से कहो ।

उद्धव : मैंने तो बहुत कहा, समझायी । किन्तु तुम तो नहीं सुनती हो । अब मैं सीधे जाकर नंदनंदन से कहता हूं कि तुम नहीं आओगी ।

[सूत्र : इस प्रकार उद्धव ने राधा जी को बहुत मनाकर देखा । किन्तु व्यर्थ । फिर वह श्याम से यह कहने चल पड़ा कि राधा जी नहीं आएगी ।]

राग–केदार गौल **दरू** **ताल–चतुरश्र एक**

राधा :– देखो मित्रो ऊधो चले श्याम पास ।।
बहुत मनायो राधा जी नहीं आयी,
कहने चले ऐसी बात ।।

प ।। प म प सां । सां सां । सां । सां नि नि रिं सां ।। नि द प । पा स स ।
प नि सं रिं । रीं रीं ।।
देखो मित्रो । ऊ । धो चले । श्याम । बहुत म । नाये ।।

गं रिं रिं मं गां रिं। सां नि सं नि। द म प नि। सां।।
राधा। जू न। हीं आ। यी।।

प नि प रिं सं। नि द प। प म प प नि द। पा प।। पा रिं सं। नि द प।।
कहने। चले। ऐसी। बात।। ऊधो। चले।।

म रि म ग। सा स।।
श्याम। पास।। देखो।।

[सूत्र : इस प्रकार उद्धव लौटकर श्याम से राधाजी का वृत्तांत कहता है।]

उद्धव : स्वामी ! तुमने जैसा कहा, वैसा ही मैंने जाकर सारे वन ढूंढ़ डाले। कहीं राधा जी न मिली। तब मुझे बड़ी प्यास लगी तो जमुना जी तीर पानी पीने गया तो वहां शीतल सुगंध निकुंज बीच राधा जी को देखा। मैंने उनको बहुत मनाया स्वामी। किन्तु वह नहीं आती है।

[सूत्र : उद्धव की यह बात सुनकर श्याम का विरह दूना हो गया। वे उद्धव से कहने लगे :]

राग—कांभोजि **दरू** **ताल—चतुरश्र एक**

कृष्ण :— अब कैसे धीरज धरूं रे कहियो ऊधो एक बात ।।अब।।
बसती ओ मेरे मन, बुलाये न बोले चैन
देखता न दिसे नयन, ऐसी है अब रीति जाने ।।अब।।
जित देखूँ तित वो दिशे जमुना तीर वे कहां बसे
मन यह न सुने बात, चित्त यासो निशि दिन उदासी ।।अब।।

प।। प म ग ग प म। पा प दा प। द सं सं नि द। द प प द।।
अब कै। से धी। रे धरूं। धरूं।।

सां सं सं रिं। गं मं रिं गं सां। सं नि द पा। प प ग म।।
रे कहि। यो ऊ। धो ए। क बात।। अब कैसे।।

अ।। सं द सं सं नि द। दा नि द द प। दा सं नि द। दप पम प।।
बसती ओ मे। रे मन।।

प प सं द सं द । सं रिं नि द प । पा नि द प रि ग । पा द सं सं ।।
बुला । ये न । बोले । चैन ।।

प म ग प प । सं द सं द सां । सं रिं गं मं रिं गं । सं सं सं सं ।। द प द रिं सं ।
देखता । न । दिसे । नयन ।। ऐसी ।

सं रिं नि द प । प म ग म ग ग रि । स रि ग म पा ।।
है अब । रीति । जा नो ।। अब कैसे ।।

च ।। प द सां सं नि द द । पा म ग पम प म । प पा प द द द ।।
जित देखूं तित । ओ दिसे । जमुना तीर ।।

स प प प द द सां ।। सं रिं गं मं गं रिं गं सं । सां नि द पा प ।
वे कहां बसे ।। मन यह ना सु । ने बात ।

प द द सं सं नि द प । म ग रि स स रि ग म ।।
चित्त यासों नि । शि दिन उदासी ।। अब कैसे ।।

[सूत्र : श्याम उद्धव से और भी कहता गया ।]

राग–मुखारि **दरू** **ताल–चतुरश्र एक**

कृष्ण :– निशि दिन विरह कैसे मैं सहूं ।।निशि।।
पल छन मोहे कल न परत है, चन्द्र किरन दुख देवे मोको ।।निशि।।
मंजु गुंज करते हैं मधुकर, मलय मारुत दुख दे मोको ।।निशि।।
शुकपिकसारीदुखदेवेदूने,राधानआवेविरहबाधाकरोना।।निशि।।

प ।। द प प द सं सं । सं नि द प प । म प म प प म । ग रि रि सा ।।
निशि दिन । विह कै । से मैं । सहूं ।।

म ग रिम । पा प नि । द सां । सं रिं गं रिंरिं सं नि द ।।
कै । से मैं । सहूं । ।। निशि दिन ।।

अ ।। प प प प । प नि द द म । प प प द । द प द सां ।।
पल छन । मोहे । कल न प । रत है ।।

सां रिं गं रिं पं मं । गं रिं सं निद । द म मा । पा सं नि निद प ।।
चन्द्र कि । रन दुख। देवे । मोको ।। निशि दिन ।।

च ।। पा द प । द प द म म म । म ग रि स रि ग म । प म ग रि स स ।।
मंजु गुं । ज कर । ते हैं । मधुकर ।।

रि म म । मा म म । नि प म ग रि स । रि म पा ।।
मलय । मारुत । दुख दे । मोको ।। निशि दिन ।।

[सूत्र : इस प्रकार राधा के विरह में अधीर हो कृष्ण उद्धव से बात करते रहते हैं। उस समय भूप्रदक्षिणा करनेवाले एक जोगी सिद्ध पुरुष जमुना तीर पर श्याम का दर्शन करने चल पड़ते हैं।]

राग–मोहन **दरू** **ताल–चतुरश्र एक**

जोगी :– जोगी आवे देखो निशि दिन वन में बसे ।। जोगी ।।
भस्म चढ़ायें अंग अंग सब, रुद्राक्षमाला धर जप करनी को।।जोगी।।
जटा मुकुट धर बांध बराबर मोर चल
कमंडल हाथ में वावे ।। जोगी ।।
निशि वासर शिव ध्यान करे
निर्मल शान्तमूर्ति है तुम निरखो ।। जोगी ।।

प ।। द सां स । दा द प । प ग ग रि । गा ग द प ।।
जोगी । आ । वे । दे ।।

ग रि सा । प द द प । प द द ग । ग प द ।।
खो । निशि दिन । बन में । बसे ।। जोगी ।।

अ ।। ग ग ग । पा प द । द सं सं सं । सं सं सं ।।
भस्म च । ढ़ाये । अंग अं । ग सब ।।

द द सं । रिं रिं सं सं । द पा प गा । पा प द ।।
अंग मा । ल धर । जप कर । नी को ।। जोगी ।।

च ।। द द दा । द द द प । पा प सं द । द़ ग प ग ।।
निशि वा । सर शिव । ध्यान क । रे नि ।।

प प पा । द द गं रिं सं । स द द प । प ग प द ।।
र्मल शां । त मूर्ति । है तुम । निरखो ।। जोगी ।।

[सूत्र : इस प्रकार आनेवाले जोगी को देख वन माली श्याम उन से बात करते हैं –]

कृष्ण : कहो महा पुरुष ! तुम कहां से आये ? और क्या क्या विद्या आती है तुम्हें ?

जोगी : सुनो स्वामी ! हम सकल देश घूम चुके हैं। सकल विद्याएं सीख गये हैं। तुम जो भी पूछोगे, उसका उत्तर कहेंगे।

कृष्ण : इस समय हमारे चित्त में एक संकल्प है। अच्छा, बताओ, वह क्या कार्य है और कब पूरा होगा ?

जो : सुनो, स्वामी ! अपनी विद्या से मैंने समझा, सो कहता हूं। एक स्त्री, तुम्हारी प्रीति पात्र तुम से रूठ कर प्रणय कलह कर इस वन में कहीं गई है। वह तुम से कब मिलेगी ? यह जानना चाहे हो ? मैं कहता हूं, वह अब आकर मिलेगी, देखते रहो।

कृ : अच्छी बात है स्वामी ! तब तो जब तक वह आएगी तुम यहीं बैठे रहो।

[सूत्र : इस प्रकार यहां श्याम सिद्ध पुरुष से जोगी से बात करते रहते हैं। अब उधर की कथा सुनिए। राधा को छोड़ उद्धव श्याम के पास जाने पर राधा की सखी उससे कहने लगती है :]

राग–यदुकुल कांभोजि **दरू** **ताल–मिश्र चापु**

सखि :– मान तज तू मानिनी, आज मोरा कह्यो तुम सुन ले मायी री ।।मान।।
उद्धौ आये मनवाने तुम वासौ निठुर कहीं
छाड़ देह ऐसी रीति तुम सुन लेवो हित की बतिया ।।मान।।
अच्छे श्याम सुन्दर सों मत कोप करो
हित चित्त कर देखो काहे को करति निठुराई ।।मान।।

प ।। सा रि । रि म पा ।। पा द सं । द प पा ।। पा द । सं द द रिं सां ।।
मान । तज तू ।। मानि । नी ।। आज । मेरो ।।

स प द । द प प म ग । ग रि म रि । सा ।। रि म प द सं । द प म ग
ग रि स द ।।
कह्यो । तुम सुन ।। ले । ।। मा । यी ।।

अ : सा रि । रि म मा ।। म गा म प । प प द प म ।। प दा । द सं सां नि ।
ऊ । धो आ ।। ये । मन वा ।। ने । तुम वा ।।

द द प । प सं द सं द सं द ।। सा ।। पा द ।। द रिं सं सं । सं द द प ।।
सों । निठुर क ।। हीं । छाड़ ।। देहूं । ऐसी ।।

प म प । प म ग म ग रि ।। ग सा । स रि रि रि ।। स रि रि म ।
प प द सां ।।
रीति । तुम सुन ।। ले । वो ।। हित की ।।

द नि सं नि द । द प पा ।। रि म प द सं । द प म ग म ग रि ।।
रि म रि स । सा ।।
बति । यां ।। मा । ।। यी । ।।

च : दा । निद द प दा ।। द पा प सां । सं सां ।। स नि द दा । द प पा ।।
अ । च्छे ।। श्या । म सुं ।। दर । सों ।।

……। प द ।। सां सं नि द द प ।। द द । द नि सं स निद ।।
……। मत ।। को । प करो ।। हित । चित ।।

द प प । म प द प ।। पा द सं । द प प म ।। म द प प म । गसरी ।।
कर दे । खो ।। का । हे को ।। करति । नुठुरा ।।

रि । म ग रि म प द सं ।। रि म प द सं । द प म ग म ग रि ।।
यी । ।। मा । ।।

रि म रि स । सा ।।
यी । ।।

[सूत्र : सखी के ये वचन सुनकर राधा जू प्रत्युत्तर देती है ।]

राग–आरभि **दरू** **ताल–चतुरश्र एक**

राधा :– अष्ट निद्धि मोपे रहे सखि, वह एक निधि कहां जान पावे ?
काहे को तू मनावन चाहे, आपु हि वे यहां आवे ।।अष्ट।।
मुख जानो महा पद्म, कर पद्म देखो सखी री ।।अष्ट।।
शंक निधि देख तू कंठ मेरो, नैन मकर निधि जान ।।अष्ट।।

कच्छप निधि देख मेरा पयोधर, कुंद निधि दसन सुहावे ।।अष्ट।।
नील निधि घन चिकुर जानो, सर्व रति सुंदर रूप मेरो ।।अष्ट।।
सकल निधि मेरो अंग बसे सखि, मुकुंद निधि आपुहि आय मिले।।अष्ट।।

प ।। म ग रि द द । प प पाम । पा द सं । द प प प ।। सं द द रि सां ।।
अष्ट नि । द्धि मो । पे र । हे सखि ।। वह एक ।

सं नि द प म । पा मा । म ग रि स रि ।। सं नि द द सं । सं रिं री ।
सं रिं मं ।
क निधि क । हां जा । न पाये ।। काहे । को तू । मना ।

गं रिं रिंसं ।। रीं सं द रिं । सं सं नि द द । प प म ग । रि म पा ।।
वन चा ।। हे आ । प हि वे । यहां । आवे ।। अष्ट ।।

अ ।। प प पा । म ग रि स । री रि रि । म पा प ।। सं द द रि सां नि ।
दप द प म ग ।
मुख । जानो मे । रो महा । पद्म ।। कर प । द्म दे ।
री स । रि म पा ।।
खो स । खी री ।। अष्ट ।।

च ।। प सं दं सं सं । रिं रीं रिं । रीं सं रिं । मं गं रिं सं ।। सं रिं रीं ।
सं द द रिं सं सं नि द प म म ग । रि म पा ।।
शंख नि । धि देख । तू कं । ठ मे ।। रो । नैन म । कर निधि। जानो ।

२. पा प द प । म म ग रि । सा । रि म गरी सा । री म प प ।।
कच्छप । निधि देखो । मेरो प । योधर ।।

सं द द रिं स सं नि । द द प म । म ग री स रि म । प दं सं नि
द प मग ।।
कुंद नि । धि दशन । सुहा । वे ।। अष्ट ।।

३. सं नि द सं सं । रिं रिं रिं सं । रिं मं गं रिं । रीं ।। सं नि द रि सं
सं नि । द द पम ।
नील नि । धि घन चि । कुर दे । खो ।। सर्व र ति सुंद ।

ग रि रि स । रि म पा ।।
र रूप । मेरो ।। अष्ट ।।

प द रि सं । सं नि दा पा । मा ग रि स । स रि रि रि ।।
सकंल नि । धि मेरो । अंग ब । से सखि ।।

प म पा द । द रिं सं सं रिं । रिं पं मं गं रिं सं नि । दपमगरिमप ।
मुकुंद । निधि आ । पु हि आ । ये मिले ।। अष्ट ।।

[सूत्र : इस प्रकार रूप गर्विता राधा जू सखी के साथ बातें करती रहती है । अब आगे का प्रसंग सुनिये । उधर श्याम जोगी से कहने लगे ।]

कृ : कहो जोगी, तुमने कहा था कि राधा आकर मिलेगी । किन्तु अब तो बहुत विलम्ब हो गया है, वह नहीं आई, क्यों ऐसी झूठ बात बोलते हो ?

जो : नहीं स्वामी ! हम झूठ कभी नहीं बोलते । हमने जो बात कही, वह सच्ची है । हमारी एकी विनति सुन लो । उनका मान छुड़ाने को स्वामी ! तुम एक बार बंसी बजाओ । वह नाद सुनते ही उनका मान छूट जाएगा और वे आपही दौड़ आएंगी । अभी आप से मिलेगी । मेरी विद्या का प्रभाव एक बार परीक्षा करके देखो ।

[सूत्र : जोगी की बात सुनकर श्याम मुरली बजाने लगते हैं ।]

राग–कानड **दरू** **ताल–चतुरश्र एक**

कृष्ण :– सखि री बंसी नाद सुन भई हम बावरी ।। सखि ।।
श्याम ने मुरली सखि भेजी मान मना मेरी हर वीनो ।। सखि ।।
चंद में को मृग यह नाद सुन सखि चंद को जान न दे ।
यासो एक छन युग सी भई, कैसे मैं बिछुरे रहूं ।। सखी ।।
भुजग देख सखि नाद लुब्ध ह्वै आहार त्यज रहे
यासों यह मलयानिल प्रबल ह्वै विरहिन दुख दे ।। सखि ।।
नाद सुने परभृत बोले भयो मधुकर भ्रमर फिरे
मोर देख खबर को खात फिरे, सुख तरु बीच रह वास करे ।।सखि ।

प ।। सरिरिप। मगमरी। सासनि़द़। नि़द़स़निस।। रीरि। सरिरिमग।

सखिरी। बंसी। नाद सु। नि भयी।। हम बा। वरी।

मग रि गमरि। सा।।

बाव। री।। सखि री।।

अ ।। मगमगम। दानिदप। मगमदद। संनिसंनिसां।।

श्याम। ने मुर। ली सखि। भेजी।।

निसंरिरिस। निसांनिदनीद। संनिसंनिपमप। दनि पमगमरिस।।

मानम। ना मे। रो हर। ली नो।। सखि।।

च ।। दसंनिनिप। पापा। ममगगम। रीरि।। ससरस।

चंद। मेंको मृग यह। नाद।। सुन सखि।

सनि़नि़द। द़सानि़सा। सनि़सरी।। दसंनिनिपमगम।

चंद। को जा। ननदे।। ।। यासो।

ददनिसंसं। संसंनिसंरिम। गंमंरिंसां।। निसांनिदनीद।

एक छन। जुग सी। भयी।। कैसे।

निसंरिंसंनिप। मपदपमगम। रिरिसा।।

मैं बिछु। रे। रहूँ।।

२. रिरिसरि। पपपप। मगमरि। रिसस।। सासनि़द़नीद़।

भुजग दे। सख सखि। नाद लु। ब्ध छ्वै।। आहा।

नि़सानि़रिस। नि़स़नि़रि। सा।। मगमदा। संनिसंनि संसं।

र। त्यज र। है।। यासों। यह।

निरिंसंनिसांनि। दनीदसंनिसं।। निसंरिंसंनि। पापमप।

मलया। निल।। प्रबल। ह्वै विर।

निसंनिनिपमगम। दनिपमगमरिस।।

हिन दुख। दे। ।। सखिरी।।

[सूत्र : इसके अलावा विरह और भी असह्य होने से राधा जू सखी से कहती है।]

राग–आनन्द भैरवि **दरू** **ताल–चतुरश्र एक**

राधा :–श्याम को सखि कब मैं देखूं बिन देखे रहा न जाये ।।श्याम्।।
सुन सखि विरहानल मेरो हरने को वनमाली घन कब पाऊंगी ।।श्याम।।
अधर पल्लव मेरो इच्छा करे ऐसो पुरुख कोकिल कब पाऊंगी ।।श्याम।।
विरह सागर यह तरि बेको मैं सखि कान्ह अच्छी नाव कब पाऊंगी।।श्याम।।

प ।। प गं रिं सं सं सं। सं सं नि रिं सं नि द। द नि प पा।। मा प नि प।।
श्याम। को सखि। कब मैं। देखूं। बिन दे।
प म प म म ग रि। स ग रि ग। म प पा।।
खूं। र हा न जाये।। श्याम को।।

अ ।। प पा प प म। प प नि सां। सं सं गं रिं गां रिं। सां सं सं।।
सं नि सं नि सां।
सुन सखि। विरहा। नल मे। रो हर।। ने को।
...। प प नि सां। सं नि रि रि सं नि द।। प प नि नि पा म।
प म ग रि नि़ स ग म।
...। वनमा। ली घन।। कब पा। ऊंगी।
प सं द नि पा म। म ग रि रि स।।
कब पा। ऊंगी।। श्याम।।

च ।। प प नि द। द नि प प प। प नि प म ग म। मग मा।। पमा।
अधर। पल्लव। मेरो। इच्छा।। करे।
प म ग रि रि म ग। म प प नि सं। सां सं सं नि।। सं सं मं मं गं रिं।
ऐसो। पुरुख। कोकिल।। कब पा।
रिं गं रिं सं सां। प प नि सं। सां सं सं।। प नी सं नी। रिं सं नि
द द नि प।
ऊंगी। विरह। सागर।। यह तरि।। बेको।

पनीदनी। पपनिप।। ममगरि। रिसस। समगमप।
मैं सखि। कान्ह।। अच्छी। नाव कब पा।

पमगरिनिसंगम।।
ऊंगी ।। श्याम को।।

[सूत्र : राधा जी सखी से और भी कहती है।]

राग–बेगड दरू ताल–चतुरश्र एक

राधा :– अब मोपे रह्यो न जाय सखि री।। अब।।
पल छन जुग से मोहे लागत है
विरहा सह्यो न जाये सखि री।। अब।।
जब से बिछुड़े मोहि नंदलाल सखि
तब से नैनन नींद नहीं री।। अब।।
जब इन नैनन श्याम को मैं देखूं
तब पलकन मग भरों सखि री।। अब।।

प।। पमगगमप। दपपदसं। निददप। पाप।।
अब मो। पे रह्यो। न जा। ये।।

पदपपसं। सांसां। पगमपगमरि। सा।।
सखिरी। । सखिरी। ... ।। अब मोपे।।

अ।। गमापपा। पदसा। दरींसंनी। ददपा।। पदापरीं।
पल छन। जुग से। मोहि ला। गत है।। विरह स।

सांनिदप। पममदपमग। गमपमगरि।।
ह्यो न। जाये। सखि री।। अब मोपे।।

च।। गमापाप। दपपप। परिंसांरिं। संनिदपसंसं।।
जब से बि। छुड़े सखि। नंद ला। ल मोहे।।

सांगंरीं। गंरिंपंमंगंरिंसंरिं। सांनिदप। पमगमगरि।।
तब ते। नैनन। नींद न। हीं री।। अब।।

२. ग मा प मा । पा द प । प रीं सं सां । सं नि द प सां ।।
जब इन । नैनन । श्यामको । देखूं ।।

सं गं रीं । सं सं रिं सं नि द प । सां गं म प । ग रि सा ।।
तब पल । कन मग । झरों । सखिरी । अब मोपे ।।

[सूत्र : इस प्रकार विरह में तड़पनेवाली राधा जी की बात सुन सखी प्रत्युत्तर कहती है ।]

सखि : सुनो माई ! मैंने तो पहले ही तुम से बिनती की थी कि मान छोड़ो, श्याम के पास चलो । तब वह मेरी बात तुम्हारे मन में न बैठी । अब वंशी निनाद ने तुम्हें शिक्षा सिखायी । फिर भी बैठी क्यों हो ? उठो, श्याम के पास जावें, चलो ।

राधा : अच्छा ! उठो सखी चलो, चलें ।

[सूत्र : इस प्रकार राधा जी सखी को साथ लेकर बंसी नाद जिस दिशा से आती है, उस ओर श्याम को ढूंढ़ती हुई चल पड़ती है । मार्ग में पेड़ों व पक्षियों से पूछती जाती है ।]

राग–यदुकुल कांभोजि **दरू** **ताल–चतुरश्र एक**

राधा :– मोसे तुम सच्ची कहो रे
परमृत तेने देख्यो कालिय मर्दन को
मधुकर तेने कहो देख्यो मधुसूदन साई को ।। मोसे ।।
शुक सारी तुम कहूं देख्यो शुकवाही जनक को
चकई तुम राह में देख्यो चक्रधर हरि को ।। मोसे ।।
सुन रसाल तैंने कहूं देख्यो सुंदर मेघ श्याम को
कहूं चंपक तेने कहो देख्यो कालिंदी तीर बिहारी को ।। मोसे ।।

प ।। रि सा रि मा । ग ग म पा । प मा प । पा द सां ।।
मोसो । तुम स । च्ची क । हो रे ।।

द प । म ग म रि री । ग रि । रि म रि सा ।।
क । हो रे । क । हो रे ।। मोसे ।।

अः पदपा। पमगगमरि। ससरि। गरिमपा।।
परभृत। तैंने। अकहो। देख्यो।।
मगासरी। रीमपादसं। दपामगसरि। मपदपा।।
कालिय। मर्दन। को। । ।।
पसंदसंसंद। दनिसंनिसंनिद। दनिदनिप। पमपमपा।।
मधुकर। तेने। कहो। देख्यो।।
पदसंदपा। पमगगरिस।। रिमपदसां।
दपमगरिमरिस।।
मधुसू। दनसां। ईं। को ।।

चः दसांनिदा। दानिददप। दसां। निदनिदनिप।।
पपापाद।
शुकसा। रीतुम। कहूं। देख्यो।। शुकवा।
मरिगप। ददसां। पदासंरिंगं।। रिंसंसांसं। संनिदप।
हिज। नककुं। चकई।। तुम रा। हमैं।
दपमपद। सांसंद।। दपपमग। मगरिसा। रिमपदसा।
देख्यो। चक्र।। धर हरि। को। हरि को।
दपमगरिस।।
............।।
सरिरिमामगम। पामपदपदा। मपदसंदपमग।
गरिमरिसा।।
सुन रसाल तैं। ने कहुं देख्यो। सुंदर मेघ। श्यामको।।
पदसांसनिदा। दपदमपदसा। मपदसदपपम।
गगगरिमरिसा।।
कहूं चंपक तै। ने कहो देख्यो। कालिंदी ती।। र बिहारी को।।

[सूत्र: इस प्रकार राधा जी सारा वन ढूंढ़ती हुई, पक्षियों से पूछती हुई आई। आखिर एक शीतल निकुंज भवन के बीच, उद्धव परम

हंस जोगी के साथ मिल बैठे श्याम को मुरली बजाते हुए देखा। फिर राधा जी कृष्ण से कहने लगती है –]

राग–सावेरि **दरू** **ताल–चतुरश्र एक**

राधा :– मोहि बिसार पिय कैसे रहे हो ?
तुम बिछुरत धीर कैसे धरूं मैं ? ।। मोहि ।।
तुम तो बसर रहे हम ना बिसारत हैं
निस दिन साईं मूरत हमारे हिरद बसो ।। मोहि ।।
निसि बासर मोहि कल न परत है
पायि परूं ववा जिस संया मोरे ।। मोहि ।।
तन मन धन वारा, साईं मोपर मेहर कर
तुम बिन और नहीं कोई सुन लो साईं ।। मोहि ।।

प दा सं सं नि । द द प म । दा पा म । ग रि स रि ।। मा । पदा
प मा । ग रि सा ।
मोहि बिसा र पिया । कैसे । रहे ।। हो । तुम बिछु । रात धी ।

रि स रि म ।। प म द प । प म ग रि । प दा सं सं नि । द द प म ।।
दा पा म ।
र कैसे । धरूं । मैं । मोहि बिसा । र पिया ।। कैसे ।
ग रि स रि । मा । प म ।। ग रि सा । । । ।।
रहे । हो । र ।। हे हो । । । ।। मोहि ।।

प दा पा म । ग रि रि रि । सा स नि । मा म ।। पा म द प ।
दा । पमा पदा ।
तुम तो । बिसर र । हे हम । ना बि ।। सारति । है । निशि दिन ।
सां सां ।। सं रिं मं मं । गं रिं सां । सं नि द प । म म दा ।।
साई ।। मूरत । हमुरे । हिरदे । बसे ।। मोहि ।।

प म पद प म ग रि । स स रि सरि म मा । प म प दप द सां ।
सां सां सं ।।
निशि वास मोहि । कलन परत है । पायि परूं वा । रूं जीन ।।

सं नि द म प द प म । ग रि स रि म प दा । । ।।
संया मो । री । । ।। मोहि ।।

[सूत्र : राधा जी के ये वचन सुन श्याम बोलते हैं ।]

राग–कल्याणी **दरू** **ताल–चतुरश्र एक**

कृष्ण :– राधा काहे को तुम आई री यहां ।
जब मैंने ऊधों को मनावन भेजा
तब निठुर तुम नाहि आई री ।। राधा ।।
जब मोहि काप बाण मारे अंग
तब तोहि बुलाया नहिं आई री ।। राधा ।।
यह तो निठुर मन है तिहारो जाना
मोहिनि झर कैसे कहेरी ।। राधा ।।

ग म पा । प नि द पा म ।। ग रि स स । नि़ स रि स ।। री प म । ग री सा ।।
राधा । काहे । को तुम । आई ।। री य । हां ।।

ग मा पा । द प पा म ।। पा द प । प द ।। नि प द नि । सां ।।
जब मैं । ने ऊ ।। धौ को । मना ।। वन भे । जा ।।

नि नी रिं रीं । नि द प प ।। सं सं नि द प पम । गरी सा ।।
तब निठु । र तुम ना ।। हि आ । यी री ।।

म दा प मा । गा रि रि ।। स स सा । रि सा ।। स रि रि रि ।
ग मा पा ।
जब मोहि । काम बा ।। ण मा । रे ।। अंग । तब तो ।

प म प प द नि । सां ।। सं सं नि द प प म । ग री सा ।।
हि बुला । या ।। नहीं आ । यी री ।। आई री ।।

नि सां द नी । प द म ।। प ग म प । म प द ।। नि प द नि । सां ।।
यह तो । निठुर ।। महै । तिहा ।। रो जा । ना ।।

नि नी रिं रिं । नि द म द ।। नि सां नि द प म । ग री सा ।।
मोहि निठु । रा कै ।। से क ।। हे री ।। आई री ।।

[सूत्र : श्याम की यह बातें सुनकर राधा जी प्रत्युत्तर कहती है।]

राग–मध्यमावति **दरू** **ताल–चापु**

राधा :– मेरे अपराध क्षमा कीजो, तुम दया कीजो ।। मेरे ।।
जान की सों अजान की सों, स्त्री स्वभाव किया
सो तुम माफ करो ।। मेरे ।।
तन तुम मेरो मन तुम मेरो जीव तुम
मेरो साईं देव तुम हो मेरो ।।मेरे ।।
कोप तजकर दया कीजो तुम
बालपन को मीत तुम मोहि गले ल्यावो ।। मेरे ।।

रि मा । पा ।। प नि । पा म ।। रि रि स । नि़ स री ।। ।
रि म ।। प प नि ।
मे । रे ।। अप । राधा ।। क्षमा । की जो ।। । तुम ।। दया ।

प म रि रि ।। सा । ।।
की ।। जो । ।।

प म प । प नि नी ।। सां । सं ।। रिं मं रिं । सं नि नि प ।। पा ।
।। प रिं रिं । रिं सं सं नि ।।

जान । की ।। सो । अ ।। जान । की ।। सो । ।। स्त्री स्व ।
भाव कि ।।

नि पा । प म पा ।। प नि । सां सं नि ।। नि प म । री सा ।।
या । सों ।। तुम । क्षमा ।। की । जो ।।

रि म । पा ।। पा । पा प म ।। रि रि स । री प म ।। री स ।
सा ।। रि म रि ।
तन । तू ।। मे । रो ।। मन । तू ।। मे । रो ।। जी ।

रि स नि़ प़ ।। नि सा । री ।। रि मा । पा ।। मा प । प नि प म ।।
री स ।
व तु ।। मे । रो ।। सा । ईं ।। देव । तू हो ।। मे

सा ।। प म प । प नि प म ।। प प नि । सां सां ।। सां । नि सं ।।
रिं मं रिं ।

रो ।। कोप । तज कर ।। दया । की ।। जो । तू ।। बाल ।

सं नि नि प ।। प म प । प नी ।। सां नि । नि प प म ।। मरी ।
रि स सा ।।

पन को ।। मीत । तुम ।। मो । हि गले ।। त्या । वो ।।

[सूत्र : राधा जी के ऐसे वचन सुन श्याम सकल जीव दयावर, सकल दया सागर, सर्वज्ञ, सर्वान्तर्यामि होने के कारण राधा जी के अपराध क्षमा कर, राधा जी पर दया कर, मंदस्मित कर मन में संतुष्ट हुए। फिर राधा जी और श्याम अति आनन्द से सरस सल्लाप करते हैं।]

राग–केदार दरू ताल–चतुरश्र एक

कृ : आओ राधा अधर दे दो

रा : साईं प्रस्तुत है ले लो।

कृ : सुकपोल चुंबन दे दो।। आओ।।

रा : साईं दयाकर ले लो।
आवो कृष्ण अधर देदो

कृ : हिल मिल गले लगाओ।। आओ।।

रा : साईं मेरे जन्म सफल बनाओ।
आवो कृष्ण अधर देदो

कृ : आओ निशि दिन मिले रहे।। आओ।।

रा : ऐसे मेरे पुण्य प्रबल भये।
आवो कृष्ण अधर देदो

स मा ग मा । पा म ग म ग ।। म प सं नि । प म ग रि ।। प सा
स नी । सा प म ।।

आओ । राधा ।। अधर । दे दो । साईं । प्रस्तुत ।।

ग रि स नि़ । सा ।। ग म पा । म प सं ।। स सं नि सं रिं । गं सं
सां ।। पं स सां ।

हे ले । लो ।। सुकपो । ल चुं ।। बन दे । दो ।। साईं ।

संनिपपम ।। गरिसरीसं । सा ।। गमापमा । गगरिस ।।
सनि़नि़सा ।।
दया ।। कर ले ।। लो ।। हिल मिल । गले ल ।। गाओ ।।

सपापमा ।। पसंसंनि । संरिंरिंगंसं ।। सनिपम । ग रिसा
गमपम । पससंनि ।।
साईं ।। मेरे । जन्म ।। सफल ब । नाओ ।। आओ । निशि दिन ।।

संरींगं । गंसां ।। पनिसंनि ।। पाम । गरिसनि़ । सा ।।
मिले र । हे ।। ऐसे । पुण्य ।। प्रबल भ । ये ।।

[सूत्र : इस प्रकार राधा जू और श्याम का प्रणय-कलह दूर हो गया। दोनों हिलमिल अति आनन्द से एक चित्त होकर सन्तोष से बैठे रहे। उन दिव्य दम्पतियों को देख नारद किन्नर किंपुरुष जय-गान आनन्द मंगल-गान करने लगे।]

—ः मङ्गल ः—

नारदादि

राग–सुरटि **ताल–चापु**

रंग बरसे मां ! रंग बरसे मां !
आज रे साजन मोरे घर आयो लो मां ! ।। रंग ।।
गाओ मंगलाचार मछल बजाओ सुकर
आनन्द बजाओ हो सखि मो घर मंगलाचार ।। रंग ।।
फूल ल्याओ मालन गूंथ करो सेहर
घर चोवा चंदन फूलेल मंगलाचार ।। रंग ।।
राधा जू को प्राणनाथ शाह नृपवर दयाकर
त्यागराज मित्र श्याम को मंगलाचार ।। रंग ।।

रीम । पसंनिद ।। पा । ।। पासं । निदपा ।। माग । रिसरी ।।
रंग । बरसे ।। मां । ।। रंग । बरसे ।। मां । ।।

प म प । प नि सां ।। सं सां । सं नि सां ।। रिं मं गं । रीं सां ।। नी द । पा ।।
आज । रे सा ।। जन । मोरे ।। घर । आया ।। लो । मां ।।

पा म । प नि द प म ।। प नी । सां ।। रिं मं गं । रीं सं सं ।। नी द । प प मा ।।
फूल । ल्याओ ।। मा । लन ।। गूं । थ क ।। रो । शहरा ।।

प नी । सा सा ।। नी द । पा प ।। नि द प । पा पा ।। म म ग । रि स री ।
घर । चोवा ।। चं । दन पु ।। ले । ला मं ।। गला । चार ।।

प मा । पा ।। प नी । सां ।। रिं मं गं । रिं सं सां ।। नी सं । रिं मं गं रिं ।।
रा । धा ।। जू । को ।। प्राण । नाथा । शाह । नृपवर ।।

सं सां । नि द प प ।। प म प । प सं सं सं ।। सां सं । नि द प प । पा प नि ।
दया । कर ।। त्याग । राज ।। मित्र । श्याम ।। को । मं

द पा । म ग रि स ।। री म । प सं नि द ।। पा । ।।
गला । चार ।। रंग । बरसे ।। मा । ।।

श्री राधावल्लभो विजयते ।

Our Publications with Critical Introductions :

		Price : Rs. P.
1.	"Seetha Kalyanamu" (Telugu Yakshagana Natak)	3-75
2.	Sringara Padamulu (Telugu Classical Songs & Poems)	4-40
3.	Indumati Parinayamu (Telugu Kavyamu)	4-00
4.	Radha Vamsidhara Vilasa Natak (Yakshagana Natak in Hindi)	3-75
5.	Sree Geeta Govindamu-Geeta Sankaramu (Sanskrit Astapadees) ..	3-75

Our next Publications :

1. Naradeeya Puranamu
2. Vaikrita Chandrika
   (Telugu grammar in Sanskrit with Telugu Commentary)
3. Kasiyatra Charitra
   (English Translation)
4. Sri Virupaksha - Srirama Sasanamulu
   (Two Copper Plate Inscriptions)

For copies :

JOINT DIRECTOR
Andhra Pradesh Government Oriental Manuscripts
Library and Research Institute,
Afzal Gunj, Hyderabad-12.

PRINTED AT THE ANDHRA PRADESH TEXT-BOOK PRESS,
MINT COMPOUND, HYDERABAD-4.